चन्दामामा
जुलाई १९७४
1
Re

Photo by: **K. R. PRASAD**

REFLECTION

झूठ बोले कौआ काटे झूठ..
HSI 7783

वी. नागि रेड्डी प्रस्तुत करते हैं
विजया और सुरेश कम्बाइन्स का
प्रेमनगर
ईस्टमैन कलर जेमिनी द्वारा
१९७४ का अति भव्य चल-चित्र
प्रधान भूमिका में—राजेश खन्ना और हेमामालिनी
एक साथ पहली बार
एक महान रोमानी प्रेम-कहानी में
फिल्मी सितारों की विशिष्ट मंडली के साथ
निर्देशन : के. एस प्रकाश राव संगीत : एस. डी. बर्मन
निर्माता : डी. रामा नायडू ।
प्रेमनगर—ऐसा अनोखा महल जहां दोनों प्रेमियों के सारे सपने पूरे हुए ।
CW/VS/4/74,HIN

एन पी क्राकीज चेक प्रतियोगिता

हमने अपने ग्राहकों के अनुरोध एवं मांग पर भरे गये प्रवेश-पत्रों की पहुँच की अंतिम तारीख़ ३१–७–१९७४ तक बढ़ा दी है।

परिणाम १९७४ सितंबर में घोषित किये जायेंगे

स्मरण रखें कि समस्त प्रवेश-पत्र दस खाली **एन पी स्ट्रिप पैक्स** (2s) के रैपर प्रवेश-पत्रों के साथ जोड़कर भेज दें।

आप अपने निकट के **एन पी डीलर** के यहाँ से प्रवेश-पत्र प्राप्त कर लीजिए।

नमूने की प्रति मंगाने के लिए 15 पैसे के डाक टिकट भेजिए: दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली-55

चन्दामामा

संस्थापक : नागिरेड्डी

संचालक : 'चक्रपाणी'

इस महीने की बेताल कथा 'मित्रता का भंग' एक अच्छा आदर्श प्रस्तुत करती है।

रंगीन चित्रोंवाला धारावाही उपन्यास "यक्ष पर्वत" इस अंक के साथ समाप्त हो रहा है। अगले महीने से "विचित्र जुड़वाँ" रंगीन चित्रोंवाला धारावाही शुरू होनेवाला है।

"मृच्छ कटिक" नामक संस्कृत नाटक में स्यालक एक दुष्ट पात्र है। 'राजा का साला' नामक कहानी के व्यंग का आधार स्यालक पात्र ही है।

वर्ष : २७ जुलाई १९७४ अंक : १

सत्संगात् भवति हि साधुता खलानाम्,
साधूनाम् न हि खलसंगमात् खलत्वम्;
आमोदम् कुसुमभवम् मृदेव धत्ते,
मृद्गंधम् न हि कुसुमानि धारयंति ॥ १ ॥

[उत्तम लोगों की मित्रता के द्वारा दुष्ट व्यक्त को उत्तम गुण प्राप्त होते हैं, लेकिन दुष्ट की मित्रता से उत्तम व्यक्ति को दुष्टता छू नहीं पाती। पुष्प पर गिरनेवाली धूल में पुष्प की गंध आ जाती है, परंतु मिट्टी में गिरे पुष्प को मिट्टी की गंध छू न पायेगी।]

कर्पूरधूली रचितालवाल:,
कस्तूरिका कुंकुम दोहदश्री:,
पन्नीरनीरै रभिषिच्यमान:,
प्रांचम् गुणम् मुंचति किम् पलांडु:? ॥ २ ॥

[प्याज के लिए कपूर के चूर्ण से आँवला बनाकर, कस्तूरी तथा कुंकुम पुष्प की खाद डाल, इत्र से सींच दे, तब भी वह क्या अपनी गंध को छोड़ देगा ?]

विद्यया विमलया प्यलंकृतो
दुर्जन: सदसि मास्तु कश्चन;
"साक्षरा:" विपरीतताम् गता:
केवलम् जगति तेपि "राक्षसा:" ॥ ३ ॥

[स्वच्छ विद्या प्राप्त व्यक्ति भी दुर्जन व्यक्ति सभा में एक भी नहीं होता, ऐसे व्यक्ति "साक्षरा:" (शिक्षित) इस संसार में उल्टे हों "राक्षसा:" (राक्षस) बन जाते हैं।]

यक्ष पर्वत

[२५]

[खड्गवर्मा, जीवदत्त तथा मणिभूषण ने जिस जगह पड़ाव डाले थे, वहाँ पर रात्रि के वक़्त एक राक्षसी आ पहुँची। उसके पति के द्वारा जीवदत्त ने यक्ष पर्वत के संबंध में थोड़े रहस्य जान लिये। आधी रात के वक़्त मणिभूषण कोई आहट पाकर नींद से जाग पड़ा और चिल्लाने लगा कि राक्षस हमला कर रहे हैं। बाद-]

मणिभूषण की चिल्लाहटें सुनकर जीवदत्त नींद से जाग पड़ा। खड्गवर्मा ने मणिभूषण को हिम्मत बंधाते समझाया- "मणिभूषण, तुम्हें डरने की कोई बात नहीं है। उन राक्षसों को मैंने समझाया कि तुम यक्ष मणिरंजित नहीं हो, बल्कि उसके सेवक हो। इस पर वे चले गये।"

इसके बाद मणिभूषण को नींद न आई। रात-भर वह जागता ही रहा। सूर्योदय के होते ही खड्गवर्मा और जीवदत्त जाग पड़े। सब कालकृत्यों से निवृत्त होकर नाव के पास चले गये। मणिभूषण पतवार पकड़कर नाव को तट से निकट रखते खेने लगा।

आधा घंटा बीत जाने के बाद नाव तट की ओर एक जगह रुक गयी। वहाँ पर नदी एक पहाड़ की तरफ़ मुड़ चली थी जिससे एक घाट बन चुका था।

मणिभूषण नाव को उस घाट पर ले गया और किनारे पर उतरते बोला–"यही यक्ष पर्वत है। अब आप लोग उतर सकते हैं। अरे, मेरे मालिक मणिरंजित हमसे मिलने के लिए यहीं पर आये हुए हैं।"

खड्गवर्मा और जीवदत्त ने नाव से उतरकर सिर उठाकर पहाड़ की ओर देखा। वहाँ पर की ऊबड़-खाबड़ शिलाओं में से एक पर एक युवक यक्ष खड़ा हुआ था। उसके हाथ में एक छोटा-सा गदा था। वह निर्मिमेष खड्गवर्मा तथा जीवदत्तों की ओर देख रहा था।

आगे-आगे मणिभूषण चलने लगा, उसके पीछे चलकर खड्गवर्मा और जीवदत्त भी उस यक्ष के निकट पहुँचे। उसने खड्गवर्मा तथा जीवदत्त की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखकर कहा–"खड्गवर्मा तथा जीवदत्त! तुम लोगों के दुस्साहस ने मुझे चकित कर दिया है। बड़ों ने कहा भी है–'बुद्धिः कर्मानुसारिणी'। बेचारे! तुम लोगों से कुछ कहने पर क्या फ़ायदा है?"

जीवदत्त ने मणिरंजित की ओर आपाद मस्तक एक बार परखकर देखा, मंदहास करते कहा–"मणिरंजित! राजकुमारी पद्मावती के मन में तुमने यहाँ के शिलारथ को हिलानेवाले को महानवीर की भावना पैदा कर दी और उस कार्य पर यहाँ आनेवालों का वध करने के लिए तुमने बड़ी अच्छी योजना बनाई है। अब वही तुम्हारे कंठ के लिए फांसी का फंदा बनने जा रही है। तुमने जिन पद्मावती तथा वसंतकुमारी नामक राजकुमारियों को बन्दी बनाया है, वे कहाँ पर हैं? वह शिलारथ कहाँ है जिसकी तुमने आवश्यकता से अधिक प्रशंसा की और जिसका तुमने हद से ज्यादा प्रचार किया?"

ये बातें सुन मणिरंजित क्रोधित हो अपने हाथ के गदे को उठाना ही चाहता था, तभी खड्गवर्मा अपनी तलवार की मूठ पर हाथ डालकर गरज उठा–"हे मणिरंजित! यदि उस शिलारथ को हम

दोनों हिला नहीं पाये तब तुम हम दोनों को मार डालने का प्रयत्न कर सकते हो! तब वसंतकुमारी की बात तो नहीं जानते, पर पद्मावती तुमको महान वीर मानकर तुम्हारे साथ जरूर विवाह करेगी। इसलिए पहले हमें दिखाओ, वह शिलारथ कहां पर है?"

मणिरंजित क्रोध में आकर कुछ कहने जा रहा था, तब मणिभूषण ने उससे कहा– "मणिरंजित, जल्दबाजी मत करो। इनके बारे में तुम्हारा अंदाज़ गलत है। मैं सावधान कर देता हूँ कि तुमने जल्दबाजी में आकर कुछ करने का प्रयत्न किया तो तुम्हें पछताना पड़ेगा। इसलिए इन युवकों को पहले शिलारथ के पास ले जाओ।"

मणिरंजित थोड़ा आश्वस्त हो यक्ष पर्वत की ओर चल पड़ा। थोड़ी ही देर में वे लोग पहाड़ पर के एक समतल प्रदेश पर पहुँचे। उसके नीचे का प्रदेश फल वृक्षों तथा फूलों के बगीचों से अत्यंत सुंदर लग रहा था। उन बगीचों के बीच थोड़े से अंतर से रथाकृति में दो भवन थे। उनमें से एक पर दो युवतियाँ खड़ी हो खड्गवर्मा तथा जीवदत्त को आश्चर्य के साथ देख रही थीं।

जीवदत्त ने उन युवतियों की ओर एक बार निहारकर पूछा–"मणिरंजित, वे ही तुम्हारे द्वारा लाई गई राजकुमारियाँ पद्मावती तथा वसंतकुमारी हैं न!"

"हाँ! तुम्हारा सोचना बिलकुल सही है। तुम्हारे शौर्य एवं पराक्रम को स्वयं देखने के लिए दोनों वहाँ पर खड़ी हुई हैं।" इन शब्दों के साथ मणिरंजित ने अपना सिर मोड़कर दांत मींचते कहा– "लो, सामने तुम लोग जिसे देख रहे हो, वही शिलारथ है!"

वहाँ से लगभग बीस फुट की ऊँचाई पर एक शिलारथ था। उस रथ के स्थान से लेकर नीचे की ओर पहाड़ ढलुआ था। खड्गवर्मा एवं जीवदत्त को उस रथ की ओर निकलते ही मणिरंजित ने पुकारा–

"मणिभूषण!" अपने सवाल का कोई जवाब न पाकर मणिरंजित ने आश्चर्य के साथ मुड़कर देखा, आसपास में कहीं मणिभूषण न था।

अपने मित्र को इस प्रकार अचानक गायब हुए देख विस्मय में आकर मणिरंजित शिलारथ के पास पहुँचा। तब तक खड्गवर्मा तथा जीवदत्त ने रथ की एक बार परिक्रमा करके देख लिया था। जीवदत्त ने झुककर रथ के निचले भाग को खड्गवर्मा को दिखाते कहा—"खड्गवर्मा, यह रथ पहाड़ में तराशकर बनाया नहीं गया है। प्रकृत रूप में अलग से यहाँ पर जो शिला पड़ी हुई थी, उसे रथाकृति में तराशा गया है। नीचे से पतली रोशनी और मनुष्यों की अस्पष्ट ध्वनि भी सुनाई दे रही है।"

जीवदत्त के मुँह से ये शब्द निकलते ही तलवार की चोट खाये व्यक्ति की भांति मणिरंजित उछलकर बोला—"यह तो आश्चर्य की बात है कि रथ के नीचे से तुम्हें रोशनी और बातें भी सुनाई दे रही हैं? यह तो असंभव है!"

"असंभव कैसे होगा? पहाड़ के भीतर के मणि-माणिक तथा सोने को खोदकर निकालनेवाले तुम्हारे गुलाम मूक तो नहीं हैं न? वे आखिर सांस लेते होंगे, बोलते भी होंगे!" जीवदत्त ने क्रोध भरे स्वर में कहा।

मणिरंजित पल भर के लिए निश्चेष्ट हो फिर रौद्र रूप धारणकर बोला—"यह बात तुम्हें किसने बताई? उस दुष्ट मणिभूषण ने तो नहीं?"

"बेचारे उस मणिभूषण की निंदा मत करो! वह सच्चे अर्थों में तुम्हारा अनुचर है, पर उसकी बातों से हमें यह भी मालूम न हुआ कि वह तुम्हारा मित्र है? या सेवक? मैंने अपनी दिव्य दृष्टि से इस यक्ष पर्वत से संबंधी रहस्यों को जान लिया है।" जीवदत्त ने हँसते हुए कहा।

मणिरंजित का क्रोध भड़क उठा। उसके नासिकापुट कांपने लगे। वह बोला–"जीवदत्त! इस दंभ के प्रदर्शन से क्या लाभ? प्रयत्न करके देखो तो सही कि तुम शिलारथ को हिला सकते हो या नहीं? तुम्हारी शक्ति एवं सामर्थ्य को अपनी आँखों से देखने के लिए पद्मपुर की राजकुमारी पद्मावती उस महल पर खड़ी हुई है!"

जीवदत्त ने खड्गवर्मा को इशारा किया और निकट के पहाड़ के नीचे रथाकृति में स्थित महलों की ओर हाथ का संकेत करते हुए पूछा–"मणिरंजित, राजकुमारियाँ जिस महल पर खड़ी हो गई हैं, उसके बगल का भवन तुम्हारा निवास गृह ही है न?"

"हाँ, यह सवाल पूछने की आवश्यकता तुम्हें क्यों पड़ी?" मणिरंजित ने कहा।

"वह महल अभी टुकड़े-टुकड़े हो धराशायी होने जा रहा है! लो, देखो अपनी आँखों से।" यों कहते जीवदत्त ने किसी मंत्र का जाप किया और दण्ड को शिलारथ पर टिकाकर पैर से उसे एक लात मारी।

दूसरे ही क्षण पृथ्वी के फटने लायक़ ध्वनि के साथ शिलारथ हिल उठा और ढलुए पहाड़ के नीचे की ओर तीर की भांति जाकर वह मणिरंजित के महल से टकराया। महल तथा उसके साथ शिलारथ अपूर्व ध्वनि के साथ टुकड़े-टुकड़े हो गये! टूटे हुए रथ के टुकड़े व महल के खण्ड
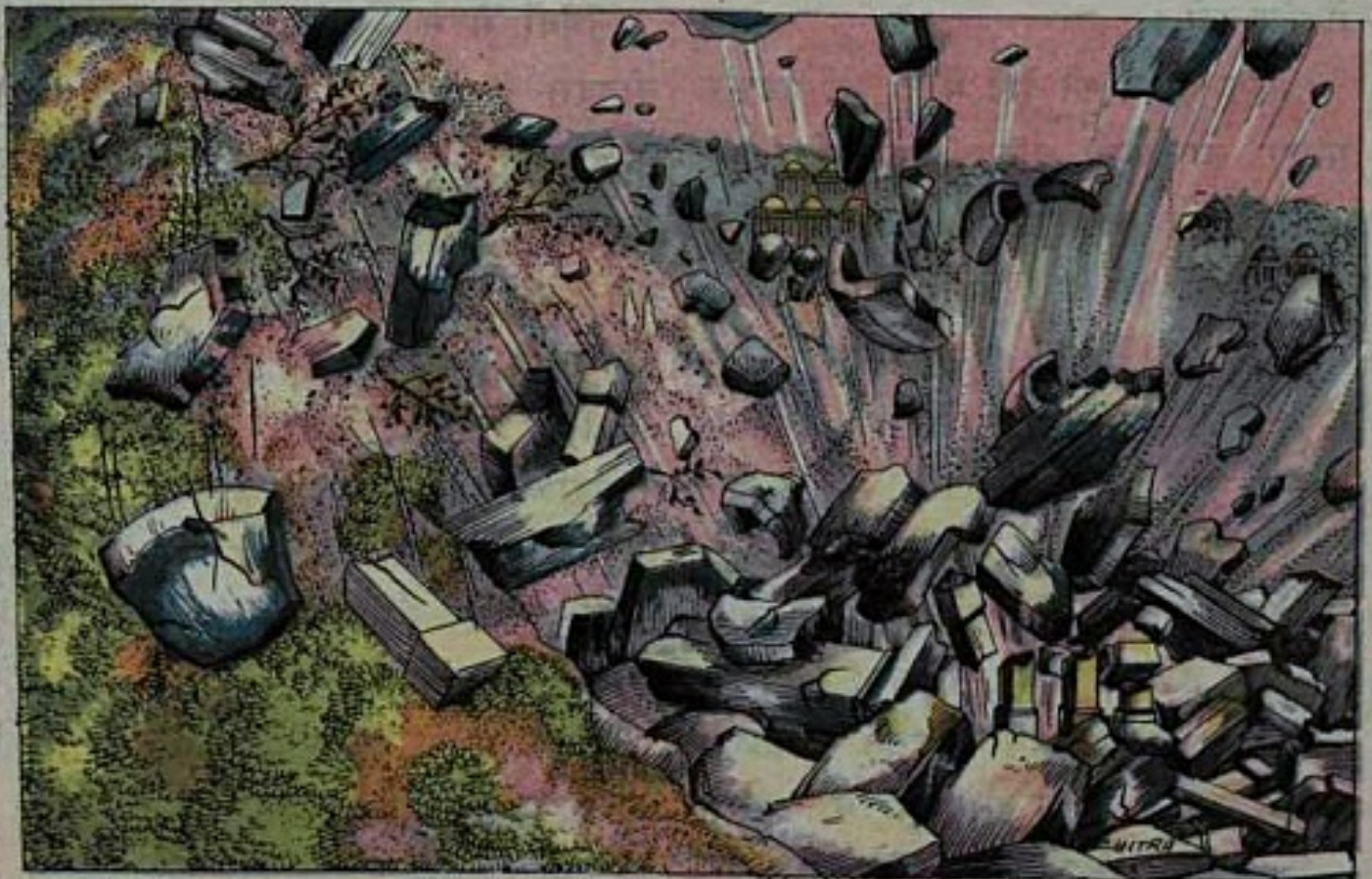
से कुछ राक्षस तथा गंधर्व चींटों की भांति पहाड़ पर आ गये और सब उल्लास में आकर कोलाहल मचाने लगे।

जीवदत्त ने उन सबको मौन रहने का आदेश दिया और कहा—"तुम सब लोग इस क्षण से स्वतंत्र हो! तुम लोगों पर अब किसी का अधिकार नहीं है। सब अपने अपने घर चले जा सकते हो।" इन शब्दों के साथ कांसे के डंके को ऊपर उठाकर बोला—"इस डंके को हमारे राज्य के आसपास में प्रवास में रहनेवाले वसुमति नामक एक गंधर्व ने मुझे दिया था। तुम में से अगर कोई गंधर्व हो तो बेरोकटोक इसे ले जा सकते हो।"

ऊपर उछल पड़े और निकट के उद्यान में फैल गये।

पलक मारने की देरी में ही इस भयंकर घटना को हठात् घटित देख मणिरंजित आपादमस्तक कांप उठा। फिर भी दूसरे ही क्षण संभलकर उसने गदा उठाकर जीवदत्त पर प्रहार करना चाहा। पर इतने में ही खड्गवर्मा ने तलवार निकाल कर उसका सामना किया।

जीवदत्त प्रसन्नता में आकर ज़ोर से हँस पड़ा, तब गंधर्व वसुमति द्वारा प्राप्त कांसे के डंके को ज़ोर से फूंका। इसके दूसरे ही क्षण शिलारथ के हटने के कारण उसके नीचे जो सुरंग बन गया था, उसमें

गंधर्वों में से एक व्यक्ति आगे आया, जीवदत्त के हाथ से डंका लेकर अपनी आँखों से लगाया। जीवदत्त मुक्त हुए राक्षसों तथा गंधर्वों से कुछ कहने जा रहा था, तभी मणिरंजित की मौत की पुकार सुनाई दी—"उफ़!" जीवदत्त ने सिर घुमाकर देखा। खड्गवर्मा ने मणिरंजित को घायल बनाकर, उसके नीचे गिरते ही, उसके वक्ष पर पैर रखकर तलवार को उसके कंठ का निशाना बनाया था।

उस दृश्य को देख जीवदत्त की प्रसन्नता की सीमा न रही। उसी वक़्त खड्गवर्मा

ने जीवदत्त से पूछा–"जीवदत्त! इस दुष्ट मणिरंजित का वध करना है या छोड़ देना है? इसने राजकुमारियों का अपहरण करके उन्हें ही नहीं, बल्कि उनके माता-पिताओं को भी अपार मानसिक क्षोभ पहुँचाया है।"

उस वक़्त वहाँ पर राजकुमारियाँ पद्मावती तथा वसंतकुमारी आ पहुँचीं। वसंतकुमारी ने आँखें लाल करके नीचे गिरे मणिरंजित की ओर देखते कहा–"मैंने प्रतिज्ञा की है कि इस नीच यक्ष को मारनेवाले वीर के साथ ही विवाह करूँगी। इसकी मौत को मैं अपनी आँखों से न देखूँ तो आजीवन मुझे ब्रह्मचारिणी बनकर रहना पड़ेगा।"

खड्गवर्मा वसंतकुमारी की ओर देख उसके अद्भुत सौंदर्य पर मुग्ध हो गया। उसको पत्नी के रूप में प्राप्त करना है तो मणिरंजित का वध करना है। इस विचार के आते ही उसने मणिरंजित के कंठ में तलवार चुभोने को ऊपर उठाया। उसी समय आसमान से यह भीकर ध्वनि सुनाई दी–"ठहर जाओ!" सब ने सिर उठाकर ऊपर देखा।

हंसाकृति में स्थित एक विमान उनके सामने आकर उतरा। उसमें से यक्षराज तथा मणिभूषण बाहर आये। यक्षराज ने

वहाँ पर के सभी लोगों की ओर एक बार देख कहा–"खड्गवर्मा और जीवदत्त! तुम दोनों महान वीर हो! इसमें कोई संदेह नहीं है! मैंने सारी बातें मणिभूषण के द्वारा जान ली हैं। यक्ष वंश पर कलंक लगानेवाले इस मणिरंजित को प्राणों के साथ छोड़ दो। वह आज से जीवित रहकर भी मृत व्यक्ति के समान है।"

खड्गवर्मा संदेह कर ही रहा था कि क्या किया जाय, तभी जीवदत्त ने कहा–"खड्गवर्मा, तुमने यक्षराज की बातें सुन ली हैं न! मणिरंजित को क्षमा करके छोड़ दो।"

"वीरपुर की राजकुमारी वसंतकुमारी की प्रतिज्ञा क्या होगी?" खड्गवर्मा ने पूछा उसकी ओर प्रश्नार्थक दृष्टि से देखते हुए। वसंतकुमारी ने सिर झुकाये पद्मावती की आड़ में जाना चाहा।

तब यक्षराज ने मंदहास करके कहा– "मैंने इसके पूर्व ही बताया कि मणिरंजित जीवित रहकर भी मृत व्यक्ति के समान हैं। इसलिए वसंतकुमारी की प्रतिज्ञा भंग का दोष न लगेगा। अब में ही स्वयं शिलारथ को हटानेवाले महा वीर जीवदत्त का पद्मावती के साथ तथा खड्गवर्मा के साथ वसंतकुमारी का विवाह करना जा रहा हूँ। पुष्पमालाएँ कहाँ?"

मणिभूषण विमान में से चार पुष्पमालाएँ ले आया और खड्गवर्मा, जीवदत्त, पद्मावती तथा वसंतकुमारी के हाथों में दिया। पद्मावती तथा जीवदत्त ने एक दूसरे के कंठ में मालाएँ पहनाईं। खड्गवर्मा तथा वसंतकुमारी ने भी ऐसा ही किया। वहाँ पर घिरे हुए लोगों के हर्षनादों के साथ सारा प्रदेश गूंज उठा।

यक्षराज ने खड्गवर्मा तथा जीवदत्त को अपनी अपनी पत्नियों के साथ विमानों पर सवार होने को कहा। उनके विमान में बैठते ही बोला–"खड्गवर्मा तथा जीवदत्त! तुम लोगों की इच्छा मात्र से यह विमान तुम जिस प्रदेश में जाना चाहोगे, उस प्रदेश को वायुवेग के साथ प्रयाण करेगा। आज से तुम लोग एक महीने तक अपनी इच्छा के अनुरूप इसका उपयोग कर सकते हो। इसके बाद मेरा यह विमान मेरे पास लौट आयेगा। तुम लोगों का शुभ हो! हो आओ।"

"हम लोग आपकी इस कृपा के लिए अत्यंत ही कृतज्ञ हैं, यक्षराज!" इन शब्दों के साथ खड्गवर्मा, जीवदत्त, पद्मावती तथा वसंतकुमारी ने यक्षराज को प्रणाम किया। विमान फुर्र से ऊपर उठकर पद्मपुर तथा वीरपुर की ओर चल पड़ा।

(समाप्त)

मित्रता का भंग

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–" राजन्, शायद तुम किसी मित्र के वास्ते इस प्रकार श्रम उठाते हो! मगर सच्ची बात यह है कि मित्रता ठहर नहीं सकती। इसके उदाहरण स्वरूप में तुम्हें दो ऐसे मित्रों की कहानी सुनाता हूँ जिसकी मित्रता टूट गई है। श्रम को भुलाने के लिए सुनो :

बेताल यों कहने लगा : प्राचीन काल में शंकर और केशव नामक दो मित्र थे। वे दोनों धनी न थे, जब वे जवान हुए और परिवार की जिम्मेदारी उन पर आ पड़ी, तब उन्हें परिवार चलाना कठिन मालूम हुआ। इस पर दोनों ने आपस में विचार करके अपनी जमीन-जायदाद बेच

बेताल कथाएँ

डाली, उस धन से दूसरे देशों में जाकर व्यापार करने का निश्चय किया।

व्यापार में उन्हें सफलता मिली। इसलिए दोनों ने एक शहर को अपना स्थाई निवास बनाकर समुद्री व्यापार भारी पैमाने पर शुरू किया। शंकर के एक पुत्र और केशव के एक पुत्री थी। दोनों मित्रों के बीच गहरी दोस्ती थी, इसलिए शंकर ने केशव को वचन दिया कि वह केशव की पुत्री के साथ अपने पुत्र का विवाह करेगा। केशव ने भी बड़ी प्रसन्नता से मान लिया।

शंकर का पुत्र तथा केशव की पुत्री दोनों अब विवाह के योग्य हो चुके थे, इसलिए वे दोनों एक शुभ मुहूर्त पर अपनी संतान का विवाह करना चाहते थे। मगर इस बीच शंकर को अचानक एक दुखद समाचार मिला कि उसके सारे जहाज़ समुद्र में डूब गये हैं।

यह खबर सुनकर शंकर हताश हो गया। उसके कर्जदारों ने शंकर की ज़मीन-जायदाद ले ली और उसे कंगाल बनाकर छोड़ दिया। शंकर उस शहर में दरिद्रता की ज़िंदगी गुजारना नहीं चाहता था, इसलिए वह अपनी पत्नी, पुत्र व कपड़े-लत्ते लेकर उस शहर को छोड़कर किसी दूसरे स्थान पर जाने के लिए तैयार हो गया।

इस पर केशव ने कहा-"दोस्त, हमने अपने बच्चों का विवाह करना चाहा, हमें अपने अपने वचन का पालन करना चाहिए।"

"मैं इस वक़्त ग़रीब हूँ। तुम अपनी संपदा के योग्य कोई अच्छा संबंध देख अपनी पुत्री का विवाह करो।" शंकर ने समझाया।

"तुम्हारी संपदा के खतम हो जाने से क्या हुआ? मेरी संपदा तो है! संयोग से जो यह घटना हो गई, इसके जिम्मेवार कौन हो सकते हैं? क्या हम धनी होकर पैदा हो गये थे? मेरी जायदाद का हमारे

दोनों बच्चों के अनुभव करते देख हम दोनों प्रसन्न हो जायेंगे।" केशव ने समझाया।

मगर इसके लिए शंकर राजी नहीं हुआ। केशव के बहुत-कुछ समझाने पर भी कोई फ़ायदा न रहा।

शंकर दक्षिण देश में मुक्तापुर में पहुँचा और वहाँ एक जौहरी की दूकान में अपने पुत्र के साथ नौकरी में लग गया। उसकी भलमानसी व अनुभव उसके यश के कारण बने। थोड़ा-बहुत धन कमाने के बाद शंकर ने अपना निजी व्यापार शुरू किया। पिता और पुत्र ने बड़ी मेहनत करके व्यापार की उन्नति की। थोड़े दिन बाद शंकर ने योग्य कन्या के साथ अपने पुत्र का विवाह किया। कुछ समय बाद उसे एक पोती भी हुई। उस लड़की का नामकरण मालती किया गया। मालती के पैदा होने के बाद शंकर का व्यापार खूब चमका। बहुत जल्द ही वह पहले जैसा धनी बन गया।

उधर शंकर के चले जाने के बाद केशव ने अपनी पुत्री का विवाह एक दूसरे व्यापारी के पुत्र के साथ किया। उसके एक लड़का हुआ। उस लड़के का नाम बसंत रखा गया।

बसंत जब युवा हो गया तब केशव से उसके समधी ने कहा—"मैंने सुना है कि अरब के देशों में हमारे माल की बड़ी माँग है। वहाँ पर प्राप्त होनेवाले खजूर
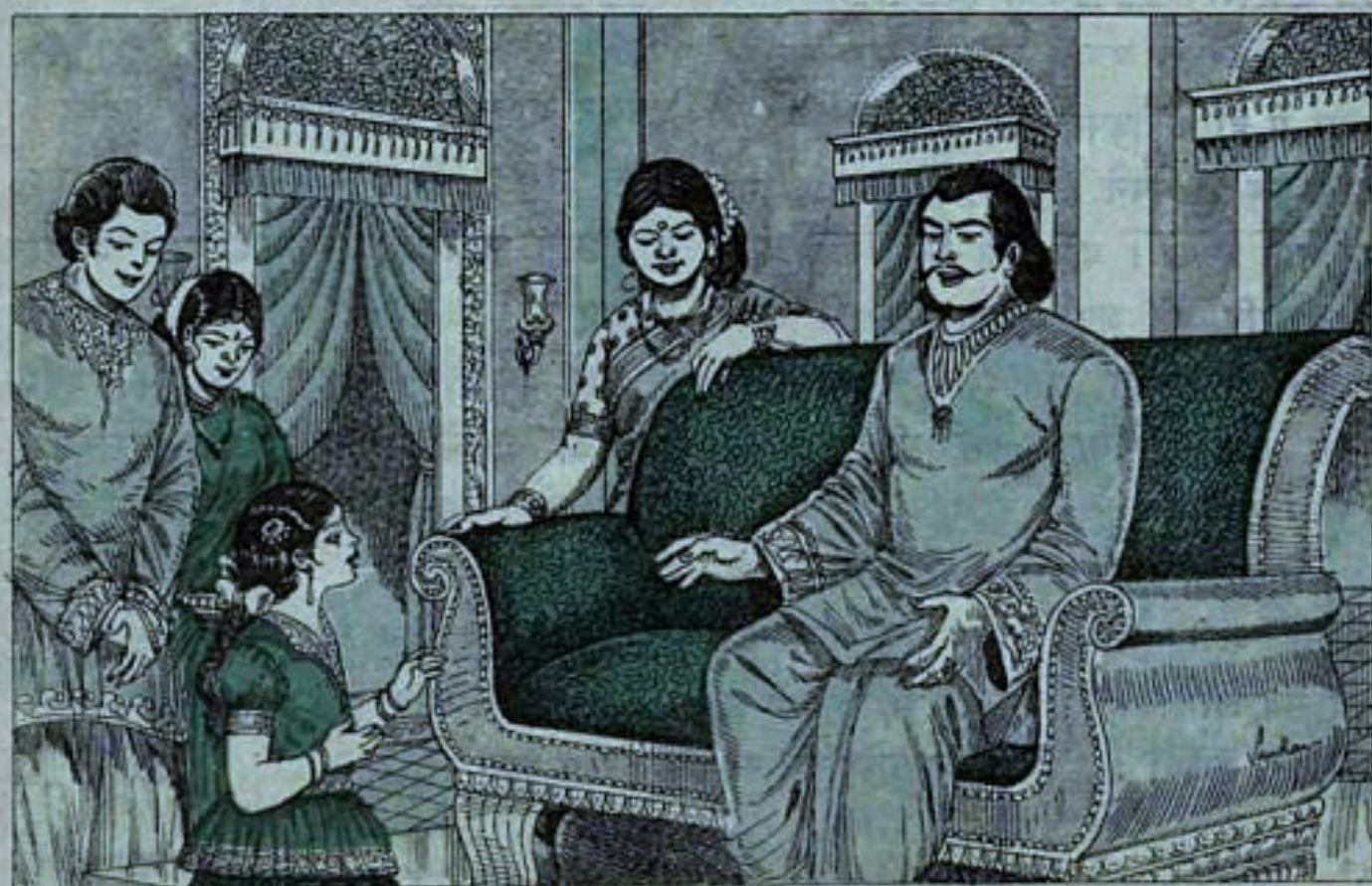
तथा शिलाजित की बड़ी माँग है। क्या हम एक बार उस देश में हो आये? अगर हमारी क़िस्मत अच्छी रही तो हम अनति काल में ही करोड़पति बन जायेंगे!"

केशव ने अपने समधी के इस प्रस्ताव को मान लिया। यात्रा के लिए आवश्यक ऊँट आदि का प्रबंध किया, जरूरी माल ऊँटों पर लदवाया, तब दोनों समधी अपने कुटुंब तथा परिवारों को भी साथ ले रवाना हो गये।

रेगिस्तान की यात्रा कुछ दिन तक अच्छी चली, लेकिन एक दिन रात को जब सब लोग बेखबर सो रहे थे, लुटेरों ने उन पर हमला कर दिया, जागनेवालों को मार डाला और माल सहित ऊंटों को भगाकर ले गये। उस हमले में केशव के पोते को छोड़ बाक़ी सभी लोग मार डाले गये। केशव और उसके समधी के दोनों परिवार लुटेरों की तलवार की बलि हो गये। उस दल में थोड़े से लोग घायल होकर बच रहें।

इस तरह जो लोग बचे रहें, वे भूख और प्यास से तड़पते रेगिस्तान को पारकर चले गये; पर वसंत को अपने देश को लौटने की इच्छा नहीं हुई, क्योंकि वहाँ पर उसका अपना कहनेवाला कोई न था। वह जहाँ भी कुछ मिलता, खा लेता, जहाँ नींद आती तो सो जाता, इस तरह कई देशों का चक्कर लगाने लगा।

इस प्रकार कई साल अनेक देश घूम-घूमकर आखिर वसंत मुक्तापुर में पहुँचा। उसने शंकर की दूकान के सामने खड़े हो पूछा—"महाशय, मुझे कोई काम दिलवा दीजिए।"

उस दुर्बल युवक पर शंकर को दया आ गई, उसको निकट बुलाकर परखकर देखा तो उसमें केशव की रूपरेखाएँ दिखाई दीं।

"बेटा, तुम किस देश के निवासी हो? तुम्हारे पिता कौन हैं? दादा कौन हैं?" शंकर ने पूछा।

वसंत ने अपनी सारी कहानी सुनाई।

शंकर क़िस्मत की लीला पर चकित होते हुए बोला–"बेटा, तुम्हारे दादा मेरे परम मित्र हैं। तुम मेरे ही पास रह जाओ। तुम्हें मैं व्यापार की कला सिखाऊँगा।"

वसंत अक़्लमंद व तेज युवक था। उसे देख शंकर भी प्रसन्न हो उठा। अपने तथा केशव के बीच की मैत्री को दृढ़तर बनाने के हेतु शंकर ने अपनी पोती मालती का विवाह शंकर के साथ किया। वे आराम से रहने लगे।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन, वसंत जब अनाथ था, तब भी अपनी पोती का विवाह वसंत के साथ करके शंकर ने केशव के प्रति अपनी पुरानी जो दोस्ती थी, उसे दृढ़ बना ली, किंतु उसी स्थिति में रहते समय अपने पुत्र का विवाह केशव की पुत्री के साथ करने में शंकर ने क्यों इनकार किया? वह अपने परम मित्र से क्यों छूट गया? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया: "शंकर सदा केशव के प्रति स्नेहभाव रखनेवाला था। मगर वह स्वभाव से स्वाभिमानी था। इसलिए उसके प्रति केशव ने जो आदर भाव दिखाया, उसे स्वीकार न कर पाया। ऐसा व्यक्ति कभी कृतज्ञता के भार को उठा नहीं पायेगा। अगर केशव ने ही अपना सर्वस्व खो दिया होता तो उसकी पुत्री का विवाह शंकर ने अपने पुत्र के साथ ज़रूर किया होता; पर ऐसा न हुआ। मगर यह स्थिति केशव के पोते को प्राप्त हुई। शंकर ने उस युवक के साथ अपनी पोती का विवाह किया।"

राजा के इस तरह मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
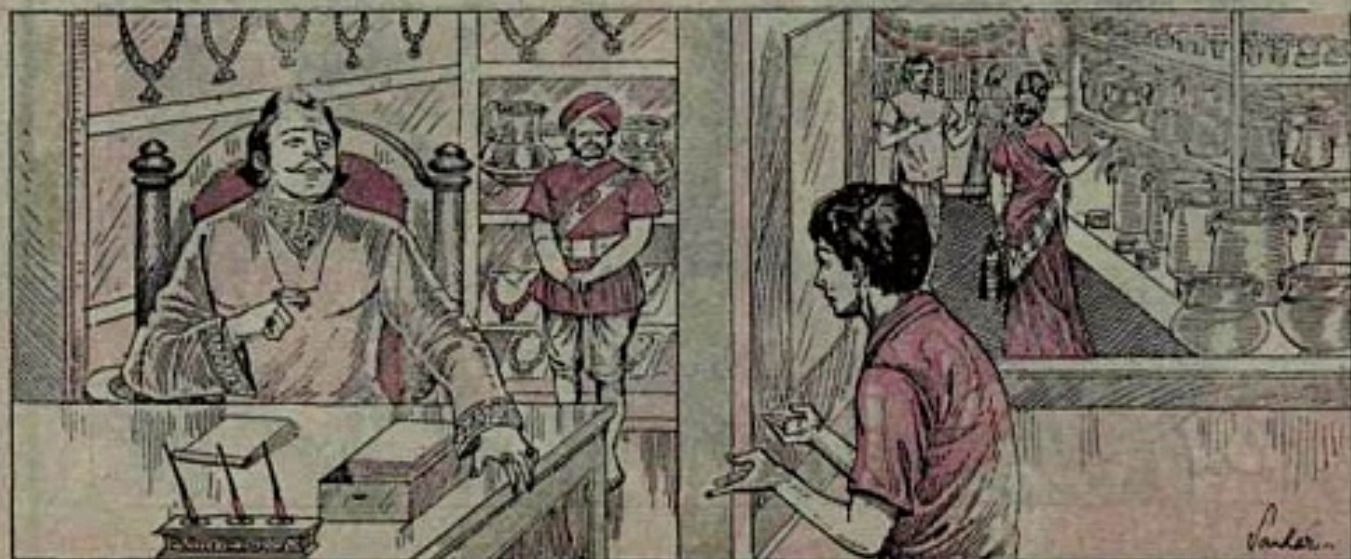
मूर्ख कौन?

एक गाँव में दो दोस्त थे। दोनों ने एक बार बातचीत के सिलसिले में अपने नौकरों को परस्पर मूर्ख बताया। दोनों ने सोचा कि उनके नौकरों में से कौन महा मूर्ख है, इसका फ़ैसला किया जाय। इस ख्याल से दोनों ने अपने अपने नौकरों को बुला भेजा।

एक ने अपने नौकर के हाथ एक पैसा देकर कहा–"अरे, तुम अभी जाकर दूकान से एक हीरों का हार ख़रीद लाओ।" इस पर नौकर यह कहकर चला गया–"मालिक, मैं अभी लिए आता हूँ।"

दूसरे ने अपने नौकर से कहा–"अबे, तुम बगीचे में जाकर देख आओ कि मैं वहाँ पर हूँ या नहीं?" नौकर मालिक का हुक्म बजा लाने चला गया।

अपने नौकरों की मूर्खता पर दोनों दोस्त हँस पड़े। इस बीच दोनों नौकर रास्ते में मिले और परस्पर यों बातें कीं।

"हमारे मालिक मूर्ख नहीं तो क्या हीरों की माला ख़रीद लाने को कहेंगे। आज इतवार है, दूकानें बंद हैं, वे यह भी नहीं जानते।" एक नौकर ने कहा।

"क्या मेरे मालिक कम मूर्ख हैं? वे बगीचे में हैं कि नहीं, यह बात माली को बुलाकर पूछ लेते तो मालूम हो जाता, नाहक़ मुझे भेजा है।" दूसरे नौकर ने कहा।

कठफोड़वा

बात बहुत पुरानी है। एक जंगल के समीप में दो लकड़हारे रहा करते थे। वे रोज जंगल में लकड़ी काटते थे। एक दिन दोनों ने सारा जंगल छान डाला, मगर उन्हें ईंधन के काम देने वाला एक भी पेड़ दिखाई न दिया। आखिर दोनों ऊबकर शाम को घर लौट रहे थे, तब उनमें से एक को अचानक चन्दन का एक पेड़ दिखाई दिया।

"देखो, अच्छी तरह से देखो तो! वह एक चन्दन का वृक्ष है।" एक ने दूसरे से कहा।

"हाँ, हाँ! आज सुबह में जब नींद से जाग रहा था, तब मुझे यही पेड़ सपने में दिखाई दिया था।" दूसरे ने लोभ में आकर पहले से कहा।

"दिखाई दिया तो?" पहले ने दूसरे से संदेह भरे स्वर में पूछा।

"ईश्वर ने इसीलिए मुझे इस ओर आने को प्रेरित किया। वरना मैं यह पेड़ देख नहीं पाता। इसलिए यह पेड़ मेरा है।" दूसरे ने कहा।

"तुम को यह पेड़ मैंने दिखाया? अगर मैं तुम्हें नहीं दिखाता तो तुम्हें पता तक न चलता कि यह पेड़ यहाँ पर है! इसलिए न्यायपूर्वक यह पेड़ मेरा है! लेकिन मैं लोभी नहीं हूँ, इसलिए तुम्हारे प्रति अन्याय नहीं करूँगा। तुम भी मेरे साथ हो! इसलिए हम दोनों इस पेड़ को आधा-आधा बांट लेंगे। यही न्याय संगत होगा।" पहले ने दूसरे से कहा।

यह बात सुनते ही दूसरा व्यक्ति नाराज हो गया और बोला–"अरे, तुम ईश्वर की कही बात को भी इनकार करते हो! सपने में ईश्वर ने ही मुझे यह पेड़ दिखाया है! फिर यहाँ पर भी उन्होंने

विमलानंद श्रीवास्तव

ही मुझे पहली बार यह पेड़ दिखाया है। तिस पर भी तुम इस पेड़ में से आधा हिस्सा मांगते हो? ऐसा कभी नहीं हो सकता। तुम चाहो तो तुम्हें में दो डाल दे देता हूँ। इससे तुम संतुष्ट हो जाओ। नहीं मानोगे तो ईश्वर की अनुमति से मैं तुम्हारा सिर फोड़वा दूंगा।"

पहला व्यक्ति धर्मभीरु था। उसने दूसरे की बातों को सच मान कर कहा– "जैसी तुम्हारी इच्छा है, वैसा ही करो।" दूसरे ने जो दो डालें दे दीं, उन्हीं से पहला व्यक्ति संतुष्ट हो गया।

दूसरा व्यक्ति अपनी अक़्लमंदी और समयस्फूर्ति पर बड़ा खुश हुआ और चन्दन का सारा पेड़ काटकर उसे अपने घर पहुँचा दिया।

पहला व्यक्ति इस घटना पर विचार करते अन्य मनस्क हो चलते हुए रस्ता भटक गया और जंगल में कहीं फंस गया। अंधेरा हो गया और चांदनी भी निकल आई। सारा जंगल घूमकर वह थक गया और एक जगह शिला पर बैठकर आराम करने लगा।

इतने में उसे किसी के कराहने के ये शब्द सुनाई दिये–"कौन है वहाँ? मुझे प्यास लगी है।" पहले ने सिर उठा कर देखा। सामने पेड़ों के बीच चांदनी में उसे एक झोंपड़ी दिखाई दी। उस में कोई था। वह जल्द वहाँ पर पहुँचा। उसने झोंपड़ी में झांक कर देखा तो मरने के

लिए तैयार बैठी एक बूढ़ी उसे दिखाई दी। एक घड़े में से पानी निकाल कर उसने बूढ़ी को पिलाया।

बूढ़ी बहुत प्रसन्न हो गयी। उसने लकड़हारे को आशीर्वाद देकर कहा–"बेटा, मैं मरने जा रही हूँ। मेरी अंतिम इच्छा है कि मेरे शरीर को चन्दन की लकड़ियों से जलाया जाय; ऐसा होने पर मेरी आत्मा को शांति मिलेगी।"

"माई! मैं गरीब हूँ, लेकिन मेरे पास चन्दन की दो डालें हैं। उन्हें मैं तुम्हारी चिता में जलाऊँगा।" लकड़हारे ने विनयपूर्ण स्वर में कहा।

"बेटा, तुम बेड़ ही क़ाबिल आदमी हो। बस, यह एक काम करो! इसके बाद मेरे बिस्तर के नीचे खोदकर देखोगे तो तुम्हें धन मिलेगा। वह सारा धन तुम्हीं ले लो। लेकिन उस में से एक हिस्सा मात्र तुम अपने लिए रखकर बाक़ी नौ हिस्से गरीबों में बांट दोगे तो तुम्हें बड़ा पुण्य मिलेगा। मरने के बाद तुम स्वर्ग में जाओगे!" यों कहकर बूढ़ी ने अपने प्राण त्याग दिये।

दूसरे लकड़हारे ने सारा चन्दन बेचकर उस धन से एक घर बनाया, खेत खरीदे और पहले व्यक्ति से बातचीत करना तक बंद किया।

पहले ने बूढ़ी के धन में से नौ हिस्से गरीबों में बांट दिये, बचे एक हिस्से में से थोड़ा धन लगा कर अपने घर की मरम्मत करायी और बाक़ी रुपये अपनी

जरूरतों के लिए बचाकर रख लिये। वह सज्जन था, इसलिए सबने उसका आदर किया और अपने सुखदुख की बातें उसे सुनाया करते थे।

सब लोगों के द्वारा पहले की प्रशंसा होते देख दूसरे के मन में पहले के प्रति ईर्ष्या पैदा हो गई। उसने एक दिन अपनी पत्नी से कहा–"मेरी समझ में नहीं आता कि मैं कैसे उसका विनाश करूँ?"

"उसको कहीं से कोई खजाना मिल गया है। उस में से रोज थोड़ा–थोड़ा निकाल कर अपनी थैली में डाल दिया करता है।" दूसरे लकड़हारे की पत्नी ने कहा।

"हाँ, ऐसा ही होगा।" दूसरे ने कहा।

एक दिन दूसरा लकड़हारा पहले लकड़हारे का अनुसरण करते उसके पीछे चला गया। वहाँ पर उसे पहला आदमी एक टूटे पेड़ पर बैठे दिखाई दिया। दूसरे ने सोचा कि वहाँ पर कोई खजाना दबा हुआ होगा।

उसने पहले के पास जाकर पूछा– "बताओ, खजाना कहाँ पर है?"

"खजाना? कैसा खजाना यह तुम क्या कहते हो?" पहले ने आश्चर्य में आकर पूछा।

दूसरे को लगा कि पहला लकड़हारा झूठ बोल रहा है। उसे लगा कि पहला लकड़हारा जिस पेड़ पर बैठा है, उसी के नीचे जरूर वह खजाना दबा होगा। गुस्से में आकर उसने पहले के हाथ से उसकी कुल्हाड़ी छीन ली और उसका सिर फोड़ दिया।

"तुम ज़िंदगी भर ढूंढ़ोगे तब भी तुम्हें वह खजाना नहीं मिलेगा!" यह कहते पहले ने अपने प्राण त्याग दिये।

दूसरे ही क्षण में दूसरा लकड़हारा कठ फोडवा के रूप में बदल गया। इसीलिए कठ फोडवे आज भी उसी खजाने के वास्ते जो भी पेड़ दिखाई देता है, उसे अपनी चोंच मारते रहते हैं।

विचित्र सपना

एक राजा ने एक रात को अत्यंत विचित्र सपना देखा। सवेरे उठने पर सबको सपने का समाचार सुनाकर राजा ने सभी लोगों को आश्चर्य में डालना चाहा। मगर नींद से जागने पर सपने की विचित्र बातों को राजा भूल गया।

इस पर निराश हो राजा ने नगर के सभी ज्योतिषियों को बुला भेजा और कहा– "कल रात को मैंने एक विचित्र सपना देखा। मगर सवेरा होते ही मैं उसे बिलकुल भूल गया। वह सपना अगर तुममें से कोई बता सकेगा तो उसे बहुत बढ़िया पुरस्कार दिया जाएगा।"

ये बातें सुन ज्योतिषी सब विस्मय में आये और बोले–"महाराज, ज्योतिष शास्त्र में इस प्रकार सपनों को बतलानेवाले कोई सूत्र नहीं हैं।"

मगर उनमें से एक ने कहा–"महाराज, अगर आप मेरे सवाल का जवाब दे सकेंगे तो मैं आपके सपने का समाचार सुनाऊँगा।"

"बोलो, तुम्हारा सवाल क्या है?" राजा ने पूछा।

"यह बताइये कि आप मुझे जो पुरस्कार देने जा रहे हैं, मैं उसको किस रूप में काम में लानेवाला हूँ?" ज्योतिषी ने पूछा।

"यह मैं कैसे जान सकता हूँ?" राजा ने आश्चर्य में आकर कहा।

"महाराज! जागनेवाले के विचार जब दूसरे लोग बता नहीं सकते तो दूसरों के सपने कैसे बताये जा सकते हैं?" ज्योतिषी ने पूछा।

राजा ने खुश हो उस चालाक ज्योतिषी को पुरस्कार देकर भेज दिया।

राजा का साला

एक जमाने में राजा महासेन सारा भारत जीतकर चक्रवर्ती बना। महासेन के हाथों में जो राजा हार गये, वे उसके सामंत बनकर उसके आदेशों का सर्वत्र पालन करने लगे और उसे नियमित रूप से शुल्क देने लगे।

साम्राज्य की स्थापना करने के विचार से महासेन ने अनेक युद्ध किये। मगर उसने कभी प्रजा को नहीं सताया। उल्टे जनता के हित के बारे में वह सदा सोचा करता था। इसके लिए आवश्यक अनेक योजनाएँ बनवाकर उन्हें सारे राज्य में अमल करवाता था। यही कारण है कि महासेन के साम्राज्य में सभी राज्य सुसंपन्न रहा करते थे, सिर्फ़ कोशल देश की स्थिति इससे भिन्न थी।

महासेन की समझ में यह बात न आई कि जब उसकी योजनाएँ सभी देशों में सफल हो गयी हैं तो केवल कोसल में क्यों विफल हो रही हैं। इस संबंध में महासेन ने काफी समाचार इकट्ठा किया, परंतु विफल होने का असली कारण मालूम न हुआ।

चक्रवर्ती के यहां एक राजपुरोहित था। उसका एक निकट रिश्तेदार गुणनिधि नामक एक भोला व्यक्ति था। गुणनिधि की बातचीत सबको हँसा देनेवाली होती थी। महासेन भी विराम के समय गुणनिधि को बुला भेजता और उसकी हास्य भरी बातें सुनकर अपना मनोरंजन कर लेता था।

गुणनिधि देवताओं के प्रति अधिक श्रद्धा एवं भक्ति रखता था। उसके मन में सभी देवताओं के दर्शनकर बहुत सारा पुण्य कमाने की बड़ी इच्छा थी। गुणनिधि ने सुन रखा था कि कोसल देश के प्रत्येक

गाँव में एक देवता है, हर गाँव में एक मंदिर है, आखिर दुर्गम जंगलों में भी अत्यंत प्राचीन मंदिर हैं। इसलिए उस देश में तीर्थाटन करने के ख्याल से वह चल पड़ा।

गुणनिधि की यात्रा सुगमतापूर्वक और आराम से हो, इस ख्याल से राजपुरोहित ने उसके लिए आवश्यक अन्य सुविधाओं के साथ एक रथ और सारथी का भी प्रबंध किया। कोसल देश की सीमा में पहुंचते ही गुणनिधि रामपुरी नामक गाँव में पहुँचा। वहाँ पर ईश्वर नटराज के रूप में सुशोभित थे। जनता ने नटराज के लिए एक सुंदर मंदिर बनवाया था। गुणनिधि उस मंदिर को देखते ही पुलकित हो उठा। मंदिर के भीतर भगवान की मूर्ति को देख वह तन्मय हो ज़ोर से चिल्ला उठा–"हर हर महादेव!"

दूसरे ही क्षण दो सिपाही कहीं से आ धमके और गुणनिधि को कसकर पकड़ लिया।

गुणनिधि ने विस्मय में आकर पूछा–"यह क्या है? मैंने तो कोई अपराध नहीं किया है? तुम लोग मुझे क्यों तंग करना चाहते हो?"

"मंदिर के गर्भगृह में चिल्लाना अपराध है। चलो, हमारे गाँव के मुखिये के
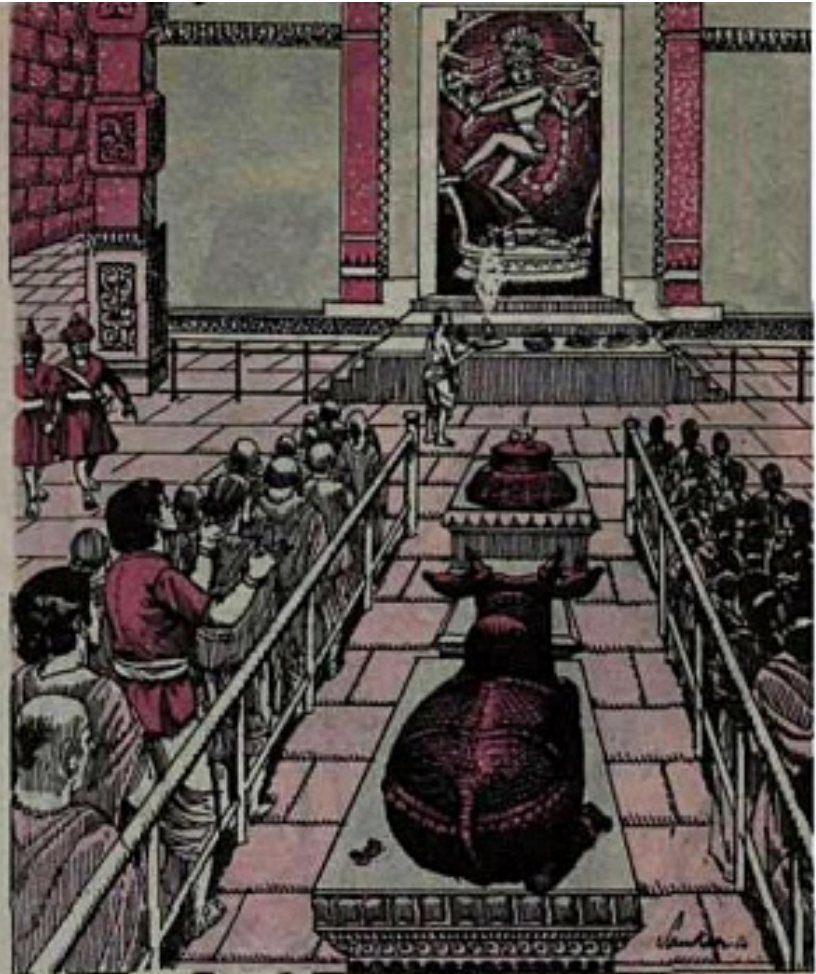
पास! वहीं पर इस अपराध का फ़ैसला होगा।" सिपाहियों ने कहा।

गुणनिधि ने उनसे निवेदन किया कि वह यह बात नहीं जानता है। इस गाँव के लिए वह नया है। इसलिए उसके इसके अपराध को पहला अपराध मानकर उसे छोड़ दे। मगर सिपाहियों ने बिलकुल नहीं माना। उल्टे वे लोग मुखिये के पास जाने की जल्दबाजी मचाने लगे। लाचार हो गुणनिधि उनके साथ जाने को तैयार हो गया।

मंदिर में बैठे एक युवक यह सब देखता रहा। उसने धीरे से गुणनिधि के निकट पहुँचकर उसके कान में यों कहा–"इन

लोगों से क्यों झगड़ा करते हो? तुम चुपचाप इन दोनों को एक एक रुपया दे दो, तुमको छोड़ देंगे।"

गुणनिधि ने दोनों को दो रुपये दे दिये। तब वे लोग उसे मुक्त करके वहाँ से चले गये। तब उसने उस युवक के प्रति कृतघ्नता प्रकट की और पूछा—"गर्भगृह में भगवान का नाम लेना अपराध कैसे हो सकता है?"

युवक ने हंसकर कहा—"इस देश में इस बात के लिए कोई नियम नहीं है कि यह सही है और वह गलत है। कब कौन बात गलत हो जाती है, इसे इस गाँव के हम लोग भी नहीं जानते! हम सिर्फ़ यही जानते हैं कि सिपाही जब हम पर दोषारोपण करते हैं, तब उन्हें रिश्वत देकर अपना पिंड छुड़ा ले। यदि मुखिये के पास जाते हैं तो वहाँ इससे भी बड़ी रक़म देनी पड़ती है। वे न्याय और अन्याय का विचार नहीं करते!"

गुणनिधि ने विस्मय में आकर पूछा—"क्या मुखिया भी रिश्वत लेता है? ऐसी हालत में आप लोग राजा से इसकी शिकायत कर सकते हैं न?"

"शिकायत क्या करेंगे? वे तो राजा के साले ठहरे!" युवक ने जवाब दिया।

गुणनिधि ने उस युवक से बताया कि वह राजपुरोहित का रिश्तेदार है। तब युवक ने कहा—"आप यह बात मुखिये से बताइयेगा तो आइंदा आपको कोई कष्ट न होगा।"

गुणनिधि ने ऐसा ही किया। फिर उसे उस गाँव में कोई तक़लीफ़ नहीं हुई। दूसरे गाँवों में भी उसने ऐसा ही किया और निर्विघ्न अपनी तीर्थयात्राएँ समाप्त कीं। लेकिन उसने हर गाँव में रामपुरी जैसे सिपाहियों के द्वारा जनता को हर छोटी-सी बात के लिए सताना, रिश्वत लेना, उसमें से थोड़ा हिस्सा ऊपरी अधिकारियों को सौंपना, ये सब स्वयं अपनी आँखों से देखा। परंतु उन

अधिकारियों के प्रति राजा से शिकायत करने से सब लोग डरते थे। क्योंकि सब गाँवों के मुखिये राजा के साले थे।

गुणनिधि ने अपनी यात्रा के दौरान में प्रायः हर गाँव में यही सुना—"हमारे गाँव का मुखिया राजा का साला हो गया, हम क्या कर सकते हैं?"

चक्रवर्ती महासेन को जब मालूम हुआ कि गुणनिधि अपनी तीर्थयात्राएँ समाप्त कर लौट आया है, तब राजा ने उसे बुला भेजा और यात्रा के विशेष समाचार पूछा। गुणनिधि ने एक-एक करके सारे समाचार सुनाये और अंत में कहा—"रसिकता में कृष्ण के बाद उस कोशल नरेश का ही नाम लेना होगा। हम बता नहीं सकते कि उसके कितने साले हैं।"

महासेन ने अपनी हँसी को रोकते हुए पूछा—"तुमने उनकी गिनती क्यों नहीं की?"

"महाराज, मैं कैसे गिन पाता? हर गाँव का मुखिया राजा का साला है। राज्य संबंधी सारे कार्य देखनेवाले सभी लोग राजा के साले हैं।" गुणनिधि ने उत्तर दिया।

इस बार महाराजा को हँसी नहीं आई। उसने गुणनिधि से कई सवाल पूछकर यह जान लिया कि गुणनिधि जो कुछ कह रहा है, वह सब उसने कोशल की जनता के मुँस से सुना है। उसे लगा कि इसमें कोई गुप्त बात होगी। महासेन की जहाँ तक जानकारी है, कोशल राजा के दो ही रानियाँ हैं। उनमें से एक महासेन की सगी बहन है। ऐसी हालत में कोशल राजा के सारे व्यवहार उसके साले कैसे देख रहे हैं। कोशल राजा की दूसरी पत्नी के हजारों भाइयों का होना असंभव है।
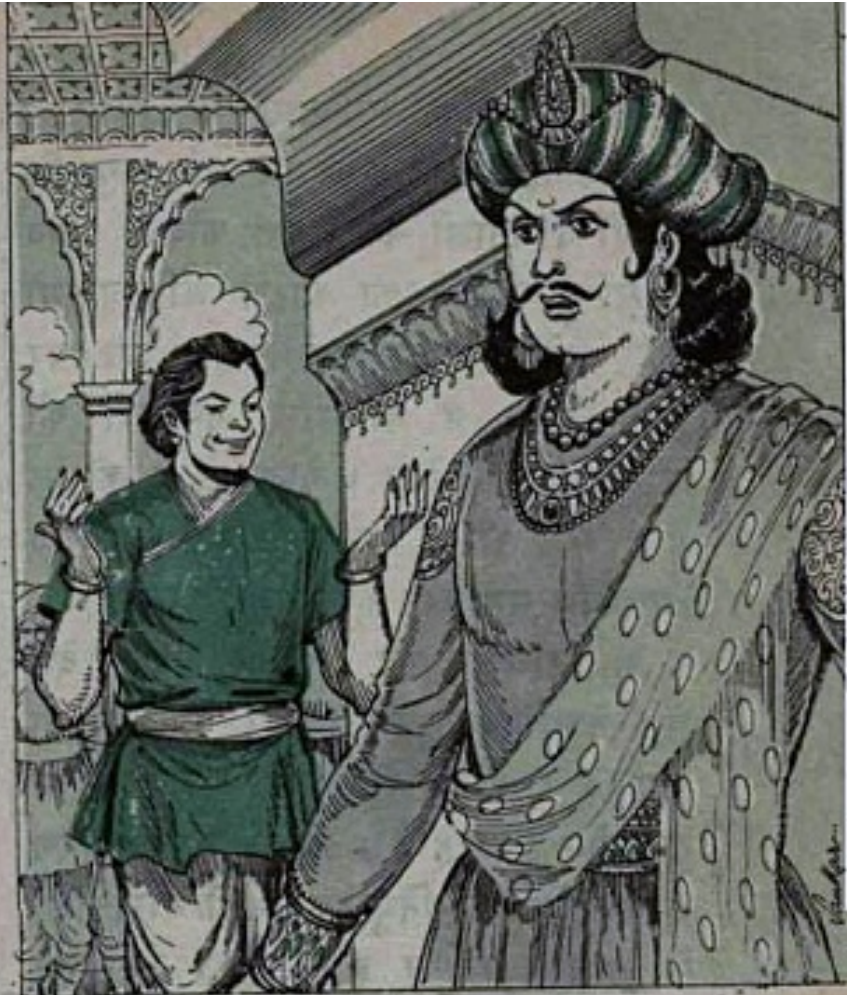
इसके बाद गुणनिधि को भेजकर राजा सोच में पड़ गया। उसने जो योजनाएँ तैयार कीं, उनकी उत्तमता पर वह प्रसन्न हो गया है, मगर उसने कभी उन्हें अमल

करनेवाले योग्य व्यक्तियों के बारे में विचार नहीं किया है। तब उसे लगा कि अपनी योजनाओं का केवल कोशल राज्य में सफल न होने का कारण अधिकारियों की अयोग्यता हो सकती है। इस पर तुरंत राजा ने दो योग्य गुप्तचरों को कोशल देश में भेजा। गुप्तचरों ने कोशल देश का भ्रमण करके राजा के लिए आवश्यक समाचार का संग्रह किया।

गुणनिधि के कहे अनुसार कोशल देश में स्वेच्छापूर्वक लोगों को सताया जा रहा है। अधिकारी अपने अधिकार का दुरुपयोग कर रहे हैं। इसका मुख्य कारण अधिकारियों की नियुक्ति उनकी योग्यताओं के आधार पर न होना ही। उदाहरण के लिए कोशल का सेनापति शूरसिंह तलवार चलाना तक जानता न था। उसका सारा पराक्रम उसके नाम में ही निहित है। वह राजा का साला था। यही कारण है कि कोशल देश में बिना योग्यता के अन्य कारणों की वजह से अधिकारी बननेवाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए 'राजा का साला' शब्द प्रचलन में आ गया था।

ये सारी बातें सुनने पर राजा महासेन की आँखें खुल गईं। कोशल राजा उसका बहनोई था, इसीलिए आज तक कोशल में अपनी योजनाओं के विफल हो जाने पर भी उसके सही कारण का पता लगाये बिना वह कोशल राजा के बताये बहानों पर विश्वास करके चुप रह गया था। अब उसे स्पष्ट हो गया कि ऐसा अंध विश्वास जनता के लिए कैसे हानिकारक साबित हो सकता है?

इसके बाद महासेन ने उचित कार्रवाई करके अयोग्य अधिकारियों को अपने अपने पदों से हटाया। कुछ ही सालों में कोशल देश फिर से संपन्न और समृद्ध बना। इसके बाद राजा ने जब उस देश में भ्रमण किया तब लोगों ने उससे यही कहा— "हमारा मुखिया राजा का साला नहीं, इसलिए हम लोग आराम से हैं।"

परिवर्तन

मेघना नदी के तट पर सुरुपा नामक एक सुंदर गाँव था। उस गाँव में जल और अनाज की कमी तो न थी; साथ ही फल और फूलों की भी कमी न थी। गाँववाले मेहनती थे। धर्मात्मा भी थे। इसलिए गाँव के लोग बड़े सुखी थे।

गाँव का मुखिया दीनानाथ साठ साल का था। वह बुद्धिमान और सज्जन भी था। स्वार्थ उसको छू तक न गया था। वह जो भी काम करता, गाँव की भलाई के लिए किया करता था। इसलिए गाँववाले सभी उसको बहुत मानते थे।

कई साल तक दीनानाथ के कोई संतान न हुई। पचास साल की उम्र में उसके एक लड़का हुआ। उसका नामकरण हरिनाथ किया गया।

हरिनाथ की उम्र के बढ़ने के साथ उसका नटखटपन भी बढ़ता गया। पढ़ने-लिखने में वह बहुत तेज था। छे साल की उम्र में उसे पाठशाला में भर्ती किया गया। वह प्रारंभ से ही अपने वर्ग में सब से प्रथम निकलता था। वह कोई बात एक-दो बार सुन लेता तो याद रखता था। पुस्तकें भी वह बहुत कम पढ़ता था।

मगर तरह-तरह का नटखटपन करके खुश हो जाने की उसकी विचित्र आदत थी। वह किसी के बगीचे में घुस पड़ता। फल और टहनियाँ तोड़ बैठता। किसी की गाय या भैंस को खोल कर गाँव के बाहर खदेड़ देता, उसके मालिकों को परेशन कर देता। श्मशान के पक्षियों को ज़िंदा रहने नहीं देता था। ढेला चला कर उन्हें मार डालता। पेड़ों पर चढ़कर पक्षियों के घोंसले तोड़ देता और अण्ड़ों को ज़मीन पर फेंक देता। इस तरह वह अनेक प्रकार के नटखट के काम कर बैठता था।

गाँव के बड़े तालाब के साथ रहनेवाले आम के बगीचे में पीले रंग के तोतों के दल रहा करते थे। पीले रंग के तोते दुर्लभ होते हैं। हरिनाथ की दुष्टता के कारण उनके विनाश का समय निकट आ गया था। उनकी संख्या दिन ब दिन घटती जा रही थी। पीले रंग के तोतों को पकड़ कर बेच करके अपनी जीविका चलाने वाले बहेलियों पर मानों उसने विपत्ति ढा दी।

एक दिन हरिनाथ पक्षी के घोंसल के वास्ते एक ताड़ के पेड़ पर चढ़ गया। वह ताड़ की टहनियों के बीच सावधानी से बैठकर पक्षी के घोंसले को तोड़ने के वास्ते हाथ बढ़ाने को हुआ। उसे सांप के फुफकारने की आवाज़ सुनाई दी। इस पर वह अपने हाथ को वापस खींचना ही चाहता था कि इतने में नाग ने उसे डंस लिया। उसके ज़हर का असर हो गया। फिर क्या था, हरिनाथ बेहोश हो ऊपर से नीचे गिर पड़ा। मगर नीचे कीचड़ थी। इस वजह से उसकी हड्डी-पसली चूर-चूर नहीं हुई। पैर की एक हड्डी मात्र टूट गई। गाँव के एक वैद्य ने तुरंत ज़हर का असर दूर करनेवाली दवा दी। जैसे-तैसे हरिनाथ की जान बच गई। बहुत दिन बाद उसकी टूटी हुई हड्डी जुड़ गई।

इसके पहले दीनानाथ ने अपने पुत्र के नटखटपन को दूर करने के सभी उपाय किये। हरिनाथ को उसने डांटा, गालियाँ दीं, बिना खाना दिये एक कमरे में बंद किया, मगर उसके ये सारे प्रयत्न बेकार हो गये। इस घटना के बाद दीनानाथ ने सोचा कि इस बार लड़के को सबक़ मिल गया है, इसलिए उसके पुत्र का नटखटपन दूर हो जाएगा। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। बाक़ी नटखट के काम उसने छोड़ दिये, मगर अण्डों के वास्ते पेड़ों पर चढ़ना उसने बंद नहीं किया।

एक दिन हरिनाथ के काका सोमनाथ ने उससे कहा–"अरे, तुम ऐसे क्रूर कैसे बन

गये हो? पक्षियों को मारने में तुम्हारा यह शौक कैसा? उस पाप के लगने से ही साँप ने तुम्हें डस लिया है?"

"काकाजी, आज कल मैं पक्षियों को नहीं मारता। सिर्फ़ अण्डों के साथ खेलता हूँ।" हरिनाथ ने जवाब दिया।

"अण्डों में भी तो प्राण है! क्या तुम यह बात नहीं जानते?" सोमनाथ ने पूछा।

"काकाजी! ये सब झूठ हैं। अण्डे गोली जैसे होते हैं। पक्षी उन से खेलते हैं। क्या हम बतख के अण्डे नहीं खाते? ऐसी हालत में हम अण्डों से खेल क्यों नहीं सकते? वे भी तो खेलने की चीजें हैं?" हरिनाथ ने हंसते हुए कहा।

"नहीं बेटे, सचमुच अण्डों में जान है!" सोमनाथ ने कहा।

"नहीं, काकाजी! अण्डे क्या हिलते हैं या आवाज़ करते हैं? उनमें प्राण होने के कोई लक्षण मुझे दिखाई नहीं देते! गोलियों में जितना प्राण है, अण्डों में भी उतना ही है।" हरिनाथ ने अपना तर्क उपस्थित किया।

"अच्छी बात है! अगर मैं यह साबित करूँ कि अण्डों में भी जान है तो क्या तुम उन्हें फोड़ना, आदि नटखट के काम बंद कर दोगे न? तुम मुझे पहले वचन दो।" सोमनाथ ने पूछा।

"मैं वचन देता हूँ, परंतु आपको यह साबित करना होगा कि अण्डे में जान है।" हरिनाथ ने कहा।

"आज दुपहर को मैं तुम्हें दिखा दूंगा कि अण्डा अपने आप हिलता है। मगर तुम्हें क़सम खानी होगी कि तुम नटखट के काम न करोगे और शौक के वास्ते ही सही अण्डों को फोड़ न दोगे। कल से तुमको बिलकुल बुद्धिमान बन जाना होगा।" सोमनाथ ने पूछा।

"मैं क़सम खाऊँगा, पर पहले आप मुझे यह साबित कर दिखा दीजिए कि अण्डों में भी प्राण है।" हरनाथ ने अपनी ज़िद प्रकट की।

जादू जाननेवाले सोमनाथ को अण्डे को हिलाना कोई मुश्किल का काम न था। उसने पीले तोते का एक अण्डा मंगवाया। उसके छोर पर एक छोटा-सा छेद बनाया, भीतर के पदार्थ को निकालकर अण्डे के भीतर का भाग साफ़कर उसे सुखाया। इसके बाद बड़ी सावधानी से अण्डे के भीतर एक कीड़े को पहुँचा दिया। छेद को मोम से भर दिया, लेकिन भीतर के कीड़े के सांस लेने लायक़ एक छोटे-से रंध्र को रहने दिया, तब उसे लाकर सोमनाथ ने हरिनाथ को दिखाया।

हरिनाथ आकर चुपचाप एक कुर्सी पर बैठ गया। तब एक मेज़ पर सोमनाथ ने उस अण्डे को रख दिया। एक भी मिनट गुजरा न था कि अण्डा हिलकर लुढ़कने लगा।

"देखते हो न, हरिनाथ? अण्डा हिल रहा है! इसका मतलब है कि उसमें प्राण है!" सोमनाथ ने समझाया।

हरिनाथ ने अपनी आँखों से अण्डे के हिलते देख लिया था, वह कैसे इनकार कर सकता था कि अण्डे में जान नहीं है, उसने भगवान के नाम पर क़सम खा ली कि वह आइंदा कभी किसी भी पक्षी के अण्डे को फोड़ न देगा।

इसके बाद हरिनाथ में बहुत बड़ा परिवर्तन हो गया। धीरे धीरे वह गाँव भर के लिए एक आदर्श बालक बना। गाँव के निवासी हरिनाथ के इस परिवर्तन पर गर्व करने लगे।

गप्पे!

एक जंगल से होकर पांच आदमी यात्रा कर रहे थे। उनमें से एक आदमी जन्म से अंधा था, एक बहरा था, एक दोनों पैरों से लंगड़ा था, एक लूला और पांचवां आदमी कंगाल था।

अचानक बहरे ने किसी आहट को सुनने का अभिनय करके कहा–"दूर से घोड़ों की टापों की आवाज़ आ रही है। लगता है, लुटेरे आ रहे हैं। हम लोगों को बहुत सावधान रहना चाहिए।"

इस पर झट अंधे आदमी ने कहा–"लो, अच्छी तरह से देखो, आसमान में धूल भी उड़ रही है।" इस पर अंधे के कंधों पर बैठे लंगड़े ने कहा–"तब तो चलो, हम लोग दौड़कर भाग जायें!"

"अबे, कायर की तरह भागना कैसा? लुटेरों से हाथा-पाई करके उनके छक्के छुड़ा देंगे।" लूले ने कहा।

ये सारी बातें सुननेवाले दरिद्र व्यक्ति ने कहा–"लुटेरे आकर जब तक मुझे बिलकुल लूट न लेंगे, तब तक तुम लोग ऐसे ही बकते रहोगे।"

पोल खुल गई!

गोपालपुर में शिवशर्मा नामक एक युवक था। उसके माँ-बाप मर गये थे। उसके पास बाप-दादों के जमाने का एक हीरा था। उसने सोचा कि हीरे को कहीं गिरवी रखकर थोड़ा धन ले ले और उस धन से कोई व्यापार शुरू करे। इस विचार के आते ही शिवशर्मा धनगुप्त नामक एक अमीर के यहाँ गया, अपना हीरा गिरवी रखकर थोड़े रुपये ले आया।

उस धन से शिवशर्मा ने दूर के शहर में जाकर माल खरीदा। पड़ोसी गाँव के हाट में व्यापार शुरू किया।

धनगुप्त ने शिवशर्मा के हीरे को परखकर देखा। वह क़ीमती हीरा था। उसे अपनी पत्नी के हाथ देकर सावधानी से छिपाकर रखने का आदेश दिया।

धनगुप्त की पत्नी ने जान लिया कि वह क़ीमती हीरा है। इसलिए उसने अपने पति को सलाह दी—"तुम अभी जाकर नकली हीरों के व्यापारियों से इसी प्रकार का एक हीरा लेते आओ। शिवशर्मा जब हमारा कर्ज चुकाएगा, तब उसे यह नकली हीरा दे देंगे तो असली हीरा हमारे पास रह जाएगा।"

धनगुप्त पहले ही लोभी था। उसे अपनी पत्नी की यह सलाह बड़ी अच्छी लगी। वह नकली हीरों के व्यापारियों के यहाँ से ठीक उसी प्रकार एक हीरा खरीद लाया। उधर शिवशर्मा को व्यापार में बड़ा लाभ हुआ। उसने रुपये लाकर धनगुप्त को व्याज सहित चुका दिया।

धनगुप्त ने दो-एक बार रुपये गिन लिये, तब नकली हीरा लाकर शिवशर्मा के हाथ दे उसे भेज दिया।

शिवशर्मा संदेह किये बिना उस हीरे को लेकर अपने घर पंहुँचा। उसे सुरक्षित

रमेश सहगल

छिपाते वक़्त परखकर देखा तो उसे संदेह हुआ कि वह हीरा उसका नहीं है। इस पर वह उस नकली हीरे को लेकर न्यायाधिकारी के यहाँ पहुँचा, सारा समाचार सुनाकर बताया कि वह हीरा उसके हीरे जैसा नहीं है।

न्यायाधिकारी को भी संदेह हुआ कि वह हीरा असली नहीं है। उसने हीरों के एक पारखी को बुलाकर दिखाया तो उसने हीरे को उलट-पलटकर देखा और बताया कि वह कांच का टुकड़ा है।

न्यायाधिकारी को मालूम हुआ कि धनगुप्त ने शिवशर्मा को धोखा दे दिया है। न्यायाधिकारी ने उसी वक़्त सोच-समझकर एक योजना बनाई और उसे हीरे के पारखी तथा शिवशर्मा को सुनाकर उन्हें भेज दिया।

न्यायाधिकारी के कहे मुताबिक़ शिवशर्मा ने धनगुप्त के घर जाकर कहा–"यह हीरा मेरा नहीं है। मेरा हीरा मुझे वापस दिला दो।"

"मैंने तुम्हारा हीरा तुम्हें वापस कर दिया है। मेरे पास हीरों का ढेर नहीं लगा है जिससे मैं तुम्हारे हीरे को बदल सकूँ? मैं हीरों का व्यापारी थोड़े ही हूँ?" धनगुप्त ने गुस्से में आकर उससे डांटकर कहा।

"तब तो चलो, न्यायाधिकारी के यहाँ? वहीं पर फ़ैसला हो जाएगा।" यों कहते शिवशर्मा धनगुप्त को न्यायाधिकारी के पास ले गया।

न्यायाधिकारी ने शिवशर्मा की फ़रियाद पहली बार सुनने का अभिनय करते कहा–"आप तो कहते हैं कि शिवशर्मा का हीरा आपने लौटा दिया है। पर शिवशर्मा कहते हैं कि यह नकली हीरा है, उनका नहीं है। इसलिए हीरे के पारखी को बुलवाकर इसकी जांच करवा दे तो सचाई प्रकट हो जाएगी।"

हीरों के पारखी की बात सुनते ही धनगुप्त यह सोचने लगा कि अगर सचाई

प्रकट हो जाएगी तो वह कौन-सा झूठ बोलकर बच जाय! इतने में हीरों का पारखी आ पहुंचा। उसने न्यायाधिकारी के दिये हीरे की देर तक जांच की और तब कहा–"यह असली हीरा है। इसकी क़ीमत भी बहुत ज्यादा है!"

धनगुप्त यह बात सुनकर मन ही मन विस्मित हुआ, पर प्रकट रूप में गंभीर बना रहा।

न्यायाधिकारी ने शिवशर्मा से कहा–"धनगुप्त जैसे ईमानदार लोगों के प्रति आपका फ़रियाद करना बिलकुल अनुचित है! आप अपने हीरे को लेकर जा सकते हैं।" इसके बाद धनगुप्त को अनावश्यक श्रम देने के कारण उससे क्षमा भी मांगी।

धनगुप्त घर लौटते यह सोचकर घबराने लगा कि–"हीरे के पारखी ने नकली हीरे को असली हीरा क्यों कर बताया है! कहीं असली हीरा ही शिवशर्मा के हाथ में नहीं पड़ गया?"

उसने घर लौटते ही अपनी पत्नी से कहा–"अरी, मूर्खा, तुमने हमारा घर डुबो दिया? दोनों हीरों को उलट-पलटकर देखते वक़्त बदलकर हमने असली हीरे को ही शिवशर्मा के हाथ दे दिया है! तुम्हारे पास जो हीरा है, उसे जल्दी ले आओ।"

यह बात सुनकर धनगुप्त की पत्नी घबरा गयी। असली हीरे को लाकर अपने पति के हाथ देते उसने खिड़की की ओर देखा। इस घटना को खिड़की में से देखनेवाले न्यायाधिकारी तथा शिवशर्मा को देख उसका चेहरा सफ़ेद पड़ गया।

न्यायाधिकारी ने धनगुप्त से दर्वाज़ा खुलवाकर कहा–"असली हीरे का पता लगाने के लिए हमें यह नाटक रचना पड़ा है।" इसके बाद असली हीरा लेकर न्यायाधिकारी ने शिवशर्मा को सौंप दिया। धोखा देने के अपराध में धनगुप्त को जुर्माना लगाया और कठिन दण्ड भी सुना दिया।

मस्तक का मूल्य!

एक दिन सम्राट अशोक अपने मंत्री इत्यादि के साथ कहीं जा रहा था, तब रास्ते में एक बौद्ध भिक्षु उसे दिखाई दिया। सम्राट ने अपना मस्तक झुकाकर बौद्ध भिक्षु को प्रणाम किया।

भिक्षु के चले जाने पर मंत्री ने अशोक से कहा–"महाराज, रास्ते में दिखाई देनेवाले हर बौद्ध भिक्षु के चरणों पर अपना मस्तक झुकाकर प्रणाम न कीजिएगा। यह आपके लिए शोभा नहीं देता। कृपया आइंदा ऐसा न कीजिए।"

दूसरे दिन अशोक ने अपने मंत्री के हाथ बकरी का एक सिर, बाघ का सिर तथा एक मृत व्यक्ति का सिर देकर उन्हें बेच आने को कहा। मंत्री उन सिरों को एक सेवक के हाथ दे बेचने को चल पड़ा। बकरी का सिर तुरंत बिक गया। बाघ का सिर भी अपनी दीवार पर शोभा के हेतु लटकाने के लिए एक अमीर ने ख़रीद लिया। मगर मनुष्य के सिर को किसी ने नहीं ख़रीदा। मंत्री उस सिर को अपने साथ ले अशोक के पास लौट आया और बताया कि किसी ने उसे नहीं ख़रीदा है।

"मंत्री, देखते हो न? मानव के मस्तक का कोई मूल्य नहीं। ऐसे सिर को बौद्ध भिक्षु के चरणों का स्पर्श कराने में हानि क्या है?" अशोक ने समझाया।

बिलाव का पहरा

पुराने जमाने में एक राजा था। उसके चार पुत्र थे। वे हमेशा अंतःपुर में ही अपना समय बिताते थे। राजा को यह पसंद न था। उसका विश्वास था कि नये अनुभवों के होने पर ही उन्हें दुनियादारी का ज्ञान होगा।

इसलिए एक दिन शतरंज खेलनेवाले अपने पुत्रों को देख कहा—"हमेशा इस क़िले में बैठे रहने से मुझे दुनिया की विचित्र घटनाओं का पता नहीं चला रहा है। तुम चारों जाकर चार विचित्र दृश्य देखकर मुझे बता दो।"

दूसरे दिन मुँह अंधेरे चारों राजकुमार चार घोड़ों पर सवार हो चल पड़े। वे नगर को पारकर जब एक जंगल में पहुँचे तब सबसे बड़े राजकुमार ने कहा—"हम चारों चार दिशाओं में जायेंगे। वहाँ के दृश्य देख लौटकर पिताजी से बतायेंगे।" यों कहकर वह उत्तरी दिशा की ओर चल पड़ा।

बड़े राजकुमार के चले जाने के बाद दूसरे राजकुमार के मन में एक संदेह पैदा हुआ। उसने सोचा, बड़े भाई अकेले गये हैं। उन्हें यदि कोई विपत्ति हो जाय तो कौन उनकी मदद करेगा? यह सोचकर वह भी उत्तरी दिशा में चल पड़ा।

बड़े दो राजकुमारों को उत्तर की ओर गये देख तीसरे ने भी उसी दिशा में जाने का निश्चय किया। उसके थोड़े पीछे चौथे ने भी उसका अनुसरण किया।

बड़ा राजकुमार अंधेरा फैलने तक यात्रा करके एक नदी के तट पर पहुँचा। नदी से लगकर एक पहाड़ था। उस पहाड़ पर एक उजड़ा मकान था। बड़े राजकुमार ने वह रात उस मकान में बिताने का निश्चय किया और अपने घोड़े

दीनानाथ मल्होत्रा

को नीचे ही छोड़कर पहाड़ पर चढ़ गया। पहाड़ पर का उजड़ा मकान विशाल था। मकान के द्वार पर एक बिलाव बैठा था। बड़े राजकुमार को देख वह विकृत रूप से चिल्ला उठा और हट गया।

बड़े राजकुमार ने दर्वाज़ा खटखटाया, तब एक योगिनी ने आधा किवाड़ खोलकर झांककर देखा। उसकी जटाएँ लंबी थीं। सारे शरीर में गेरुए रंग का एक अंगरखा पहने हुए थी। उसके गले में मदार के फूलों की माला पड़ी थी।

"घबड़ा देनेवाला बिलाव द्वार पर ही पहरा दे रहा है। दर्वाजा बंदकर अंदर आ जाओ।" यह कहते वह योगिनी अन्दर चली गई। बड़ा राजकुमार दर्वाजा बंदकर अंदर चला गया। योगिनी ने आले में से दिया निकालकर जलाया। उस कमरे की खिड़की में से अच्छी हवा बह रही थी। क्योंकि वह मकान पहाड़ी छोर पर बना था। वह खिड़की नीचे बहनेवाली नदी के ऊपर थी।

"खाने को कुछ है?" बड़े ने पूछा।

"मछली की तरकारी चाहिए या बासी भात चाहिए?" योगिनी ने पूछा।

"मछली की तरकारी ही चाहिए।" बड़े ने कहा।

"तब तो तुम्हीं वह मछली बन जाओ।" यों कहते योगिनी ने अपने कंठ की मदार माला में से एक फूल तोड़कर राजकुमार पर फेंक दिया।

दूसरे ही क्षण में बड़ा राजकुमार मछली में बदलकर छटपटाने लगा। योगिनी खिलखिलाकर हँस पड़ी और उस मछली को जलवाले घड़े में डाल दिया।

तब तक दूसरा राजकुमार भी नदी के तट पर पहुँचा। वहीं पर घास चरते बड़े राजकुमार का घोड़ा तथा पहाड़ पर घर भी दिखाई पड़ा। उसने असली बात जान ली और वह भी अपने घोड़े को नीचे ही छोड़ पहाड़ पर गया।

मकान के द्वार पर बैठा बिलाव दूसरे राजकुमार को देखते ही विकृत रूप से हंस पड़ा और द्वार से हट गया। दूसरे राजकुमार ने दर्वाजा खटखटाया, योगिनी ने आधा किवाड़ खोल कहा–"घबड़ा देनेवाला बिलाव द्वार पर पहरा दे रहा है। तुम दर्वाजा खोल अंदर आ जाओ।"

दूसरा राजकुमार दर्वाजा बंदकर भीतर चला गया। उसने भी खाना मांगा।

"पकाने के लिए घड़े में मछली पड़ी है। खाना तुम्हें चांदी की थाली में परोस दूं या पत्तल में?" योगिनी ने पूछा।

"चांदी की थाली में ही परोस दो।" दूसरे ने कहा।

"तब तो तुम्हीं चांदी की वह थाली बन जाओ।" यों कहते योगिनी ने एक मदार फूल तोड़कर उस पर फेंक दिया।

दूसरा राजकुमार चांदी की थाली में बदल गया। योगिनी ठठाकर हँस पड़ी। इतने में फिर दर्वाजे पर आहट हुई। योगिनी ने किवाड़ खोलकर बिलाव को चेतावनी दी और अन्दर आ गई। तीसरे राजकुमार ने भीतर प्रवेश करते हुए कहा– "मेरे पेट में चूहे दौड़ रहे हैं, खाने को जल्दी कुछ दे दो।"

"पकाने के लिए मछली है, खाने को चांदी की थाली है। अब सोने के लिए रेशमी विस्तर चाहिए या चटाई?" योगिनी ने तीसरे से पूछा।

"मुझे तो रेशमी विस्तर ही चाहिए!" तीसरे ने कहा। इस पर योगिनी ने उसे रेशमी विस्तर के रूप में बदल डाला और वह रसोई बनाने में निमग्न हो गई।

चौथे राजकुमार ने नदी के किनारे चरनेवाले घोड़ों तथा पहाड़ पर एक मकान को देख सोचा कि उसके भाई उस मकान में होंगे; वह भी पहाड़ पर आ गया। द्वार पर बैठा बिलाव उसे देख भयंकर रूप से चिल्ला पड़ा और हट गया। उसके दर्वाजे पर दस्तक देते ही योगिनी ने आकर द्वार खोल दिया।

उसने योगिनी से पूछा–"मेरे तीन बड़े भाई यहाँ आये हैं। दिखाई क्यों नहीं देते?" उस उजड़े मकान और उस योगिनी को देखते ही चौथे राजकुमार के मन में संदेह पैदा हुआ।

योगिनी ने नाक-मुंह सिकोड़कर कहा–"रास्ते चलनेवाले हर किसी का पता मुझे कैसे लगेगा? भीतर आना चाहते हो तो दर्वाजा बंदकर आ जाओ। द्वार पर बिलाव पहरा दे रहा है।" यों कहते वह अन्दर चली गई।

चौथे राजकुनार को योगिनी का यह व्यवहार देखते ही उसका संदेह और बढ़ गया। उसने अपनी कमर में बंधे रेशमी वस्त्र को खोल उसमें बिलाव को बांध दिया और उसे अपनी बगल में दाबे दर्वाजा बंदकर भीतर आया।

चौथे राजकुमार के कमरे में प्रवेश करते ही घड़े की मछली उछलने लगी। चांदी की थाली और रेशमी बिस्तर पर भी मदार के फूल दिखाई दिये। इससे उसका संदेह और बढ़ गया।

राजकुमार को मौन देख योगिनी ने पूछा–"घड़े में मछली है, क्या पका दूं?"

"मछली ही क्यों? मेरी बगल में आहार जो है!" चौथे राजकुमार ने उत्तर दिया।

"उसे खाने के लिए चांदी की थाली ही तो चाहिए!" योगिनी ने क्रोध में आकर पूछा।

"एक कौर खाने के लिए चांदी की थाली क्यों?" राजकुमार ने कहा। योगिनी की बिल्ली जैसी आँखों में लाल डोरी खिच गई।

"खाने के बाद सोने के लिए रेशमी बिस्तर चाहिए क्या?" योगिनी ने पूछा।

"घास पर सोनेवाले के लिए रेशमी बिस्तर की क्या ज़रूरत है?" चौथे ने उल्टा सवाल पूछा।

योगिनी ने क्रोध में आकर कहा–"बाकी तीनों से कहीं ज्यादा तुम घमण्डी हो! ठहर जाओ, मैं अभी तुम्हारा घमण्ड

तोड़ देती हूँ!" यों कहते उसने मदार का फूल तोड़ना चाहा।

इतने में चौथे राजकुमार की बगल में स्थित बिलाव कमरे को गुंजाते हुए चिल्ला पड़ा। उस चिल्लाहट को सुनते ही योगिनी थर थर कांप उठी। चौथे ने योगिनी के कंठ की मदार माला को तोड़ दिया और बिलाव को उसके ऊपर फेंक दिया। बिलाव ने अपने तेज़ नाखूनों से उसके चेहरे को खरोंच डाला। उसकी दोनों आँखों को फोड़ दिया। इस पर जान के डर से योगिनी दौड़ पड़ी और खिड़की में से पहाड़ के नीचे बहनेवाली नदी में गिरकर बह गयी।

चौथे राजकुमार ने नीचे गिरी मदार माला को भी नदी में फेंक दिया।

दूसरे ही क्षण मछली, चांदी की थाली और रेशमी बिस्तर उसके भाइयों के रूप में बदल गये।

"हमने जो विचित्र दृश्य देखें, ये ही पर्याप्त हैं। चलो, अब हम लोग घर चले।" बड़े राजकुमार ने कहा। चौथे राजकुमार ने बिलाव की बड़ी खोज़ की। पर उसका कहीं पता न चला।

अपने पुत्रों को इतने शीघ्र लौटे देख राजा विस्मय में आ गया। उसने पूछा– "बहुत जल्द आ गये? तुम लोगों ने क्या कोई विचित्र दृश्य देखे?"

"मनुष्य को मछली के रूप में बदलते मैंने अनुभवपूर्वक जान लिया है।" बड़े राजकुमार ने कहा।

"मनुष्य को चांदी की थाली में बदलते मैंने अनुभवपूर्वक देखा।" दूसरे ने कहा।

"मनुष्य को रेशमी बिस्तर के रूप में बदलते मैंने देखा।" तीसरे ने कहा।

"एक मछली, एक चांदी की थाली और एक रेशमी बिस्तर को अपने बड़े भाइयों के रूप में बदलते मैंने अपनी आँखों से देख लिया है।" चौथे राजकुमार ने कहा।

राजा ने असली बातें समझ लीं और चौथे राजकुमार के कंधे पर वात्सल्य के साथ अपना हाथ फेरा।
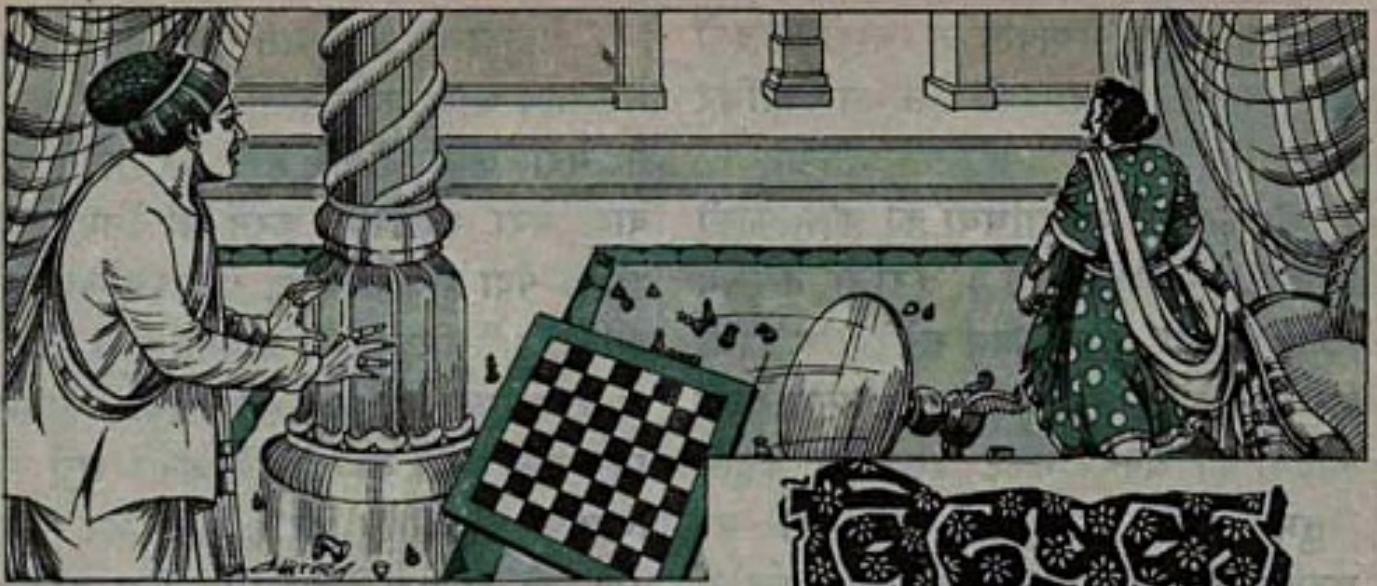
विदूषक

कांमदक देश पर राजा चन्द्रपाल शासन करता था। वह अपने दरबारी विदूषक आनंद के साथ अक्सर शतरंज खेला करता था। शतरंज में सदैव राजा की विजय होती थी।

एक दिन राजा अन्यमनस्क हो शतरंज खेलते विदूषक के हाथ हार गया। राजा खीझ उठा, शतरंज के तख्ते पर लात मारकर उठकर चला गया।

इसके बाद राजा सीधे स्नानागार में गया। जल्दबाजी में आकर हंडी पर लात मार दी। उंगलियों में चोट आने के कारण दर्द होने लगा। इस पर उसने हंडी को वहाँ पर रखनेवालों को क़ैद करने का सिपाहियों को आदेश दिया।

स्नान समाप्त कर राजा कपड़े बदलने के लिए आये। राजा ने कुर्ता पहन लिया, ज़ोर से कमरबंद पहनते वक़्त वह टूट गया। इस पर कपड़े सजानेवाले अधिकारी को गिरफ़्तार करने का आदेश दिया।

बड़ी देर से राजा में पल-पल भर क्रोध को बढ़ते देख जूते पहनानेवाला कर्मचारी कांपते हुए आया और उसने राजा के जूते उसके पैरों के आगे रखे। मगर उस घबराहट में उसने दायें पैर के आगे बायें पैर का जूता तथा बायें पैर के सामने दायें पैर का जूता रख दिया। राजा के पैर उन जूतों में ठीक से नहीं अटे।

इसी वक़्त दूसरे कमरे में विदूषक गर्व के साथ राजा को हराने की बात कह रहा था। ये बातें राजा के कानों में पड़ गयीं। राजा के क्रोध का पारा चढ़ गया। तब राजा ने सेनापति को बुलाकर जूतेवाले कर्मचारी तथा विदूषक को भी बंदी बनाने की आज्ञा दे दी। आध

कल्पना वर्मा

घड़ी के अन्दर सेनापति ने चारों बंदियों को लाकर राजा के सामने हाजिर किया।

"इन चारों अपराधियों को कल फांसी के तख्ते पर चढ़वा दो।" राजा ने हुक्म दिया। मगर दूसरे दिन सवेरे तक राजा का क्रोध ठण्डा पड़ गया था। उसने चारों क़ैदियों को अपने निकट बुलवाकर कहा– "तुम चारों को फांसी के तख्ते पर लटकवा देना मुझे पसंद नहीं है। तुम में से अगर कोई फांसी पर चढ़ने को तैयार हो जाओगे तो बाक़ी तीनों को मैं मुक्त कर दूंगा।"

विदूषक ने झट आगे बढ़कर कहा– "महाराज, ये तीनों पत्नी और बाल-बच्चेवाले हैं। मैं तो अकेला हूं। मुझे फांसी पर चढ़वाकर इन लोगों को कृपया छोड़ दीजिए।"

राजा ने बाक़ी तीनों को मुक्त करके विदूषक से पूछा–"तुमने शादी क्यों नहीं की?"

"महाराज, मेरे पास धन नहीं है। मेरे साथ शादी कौन करेगी? लेकिन आप से मेरी एक बिनती है। मेरे मरने के बाद मेरा श्राद्धकर्म करने के लिए एक पुत्र के पैदा होने तक यह दण्ड स्थगित कर दीजिए।" विदूषक ने प्रार्थना की।

राजा मन ही मन हंस पड़ा। उसने स्वयं एक कन्या को ढूंढ़कर अपने खर्च से विदूषक की शादी की। साल भर पूरा होते-होते विदूषक के एक पुत्र पैदा हुआ।

राजा ने अब विदूषक से कहा–"अब तो तुम्हारा एक पुत्र हो गया है। क्या फांसी की सजा अमल करवा दूं?"

"महाराज! यह कैसे हो सकता है? उस दिन आप ने बाक़ी तीनों को बाल-बच्चोंदार समझकर मुक्त कर दिया था, अब तो मैं भी पत्नी और बाल-बच्चोंवाला हूं!" विदूषक ने उत्तर दिया।

राजा ने हंसकर कहा–"अच्छी बात है! तब तो तुमको भी मैंने क्षमा कर दिया है।"

युधिष्ठिर तथा याज्ञिकों के प्रश्न के उत्तर में नेवले ने यों कहा :

"मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ। यह यज्ञ कभी भी सत्तू के दान की समता नहीं कर सकता। यह बात मैंने स्वयं देख ली है! पौधों से झरे दाने चुनकर कुरुक्षेत्र में निवास करने वाले मुनि, उनकी पत्नी, पुत्र व पतोहू भी स्वर्ग में गये हैं। उन्हीं की वजह से मेरे शरीर का आधा भाग स्वर्णिम बन गया है।

"मैंने जिन ब्राह्मण का उल्लेख किया है, वे अपनी पत्नी, पुत्र व पतोहू के साथ उंच वृत्ति के साथ पक्षियों की तरह जीवन बिताते थे। वे लोग दिन में एक बार आहार ग्रहण करते थे।

"एक बार भयंकर अकाल पड़ा। इस प्रदेश के सारे पेड़-पौधे झुलस गये। उस परिवार को दिन में एक बार भी खाने का मौक़ा न मिलता था। एक दिन की दुपहरी को तीक्ष्ण धूप में तपते उन लोगों ने थोड़े से जौ प्राप्त किये। उसका आटा बना कर, चार कौर बनाये; चारों बांट कर खाने ही वाले थे, तभी एक ब्राह्मण उनकी कुटी में अतिथि बनकर आया।

"उस भुखे ब्राह्मण को सबने घर के भीतर बुलाया, अर्घ्य व पाद्य देकर दाभ के आसन पर बिठाया। तब उस घर के गृहस्थ ने अपनी बारी के सत्तू का पिंड उसके हाथ दिया। अतिथि ने उसे खाया, तब भी उसका पेट न भरा था। इस पर

ब्राह्मणी ने अपने हिस्से का आहार भी उस अतिथि को बड़ी प्रसन्नतापूर्वक दे दिया। इसके बाद उस अतिथि ने क्रमशः ब्राह्मण के पुत्र व बहू के हिस्से का भी आहार ग्रहण किया। तब प्रसन्न होकर उस ब्राह्मण ने बताया कि वह यमराज है और सबको स्वर्ग की प्राप्ति होने का वर दान देने आया है।

"महाशयो, उस वक़्त मैं अपने सुरंग से बाहर आया। उस सत्तू की गंध के लगने तथा वहाँ के पानी में भीगने के कारण मेरा सर तथा शरीर का आधा भाग सोने के रंग में बदल गया। मैं यह जानकर यहाँ पर बड़ी आशा को लेकर आया कि यहाँ पर बहुत बड़ा यज्ञ हो रहा है, इसलिए मैं अपने शेष शरीर को भी स्वर्णिम बना लूँ! लेकिन मेरी वह आशा पूर्ण न हुई।"

यों सुनाकर वह नेवला सबके देखते-देखते वहीं पर अदृश्य हो गया।

युधिष्ठिर अपने भाइयों समेत राज्य का शासन कर रहा था। विदुर, संजय व युयुत्स धृतराष्ट्र की सेवा में तत्पर रहते थे। कुंती सदा गांधारी के साथ रहा करती थी। द्रौपदी, सुभद्रा, पांडवों की अन्य पत्नियाँ भी सदा उनकी देख-रेख किया करती थीं। व्यास अकसर वहाँ पर आते और कथा-कहानियाँ सुनाकर चले जाते। युधिष्ठिर किसी भी बात में धृतराष्ट्र के विरुद्ध मुँह खोलता न था। धृतराष्ट्र जो भी चाहते, युधिष्ठिर उसी समय उसे मंगवा कर देता। पांडव इस तरह व्यवहार करते थे जिससे गाँधारी तथा धृतराष्ट्र को उनके पुत्रों के वियोग का दुख न सतावे। भीम अकेले ही धृतराष्ट्र से अप्रसन्न रहता था।

धृतराष्ट्र अकसर दान-धर्म किया करता था। ब्राह्मणों को अग्रहार देता था। युधिष्ठिर ने अपने दरबारियों को कठिन आदेश दे रखा था कि धृतराष्ट्र की इच्छा के विरुद्ध व्यवहार करने वालों को कठिन

से कठिन दण्ड दिया जाएगा। संक्षेप में कहना हो तो धृतराष्ट्र के पुत्रों के जीवित रहने पर उसके दिन जैसे गुजर सकते थे, वैसे ही उनका शासन चलता था। गाँधारी और धृतराष्ट्र भी पांडवों को अपने पुत्रों के समान मानते थे।

इस प्रकार पंद्रह वर्ष बीत गये। धृतराष्ट्र तथा गाँधारी को किसी तरह की असुविधा न रही, मगर मौक़े पर भीम की जली-कटी बातें सुनकर उनके दिल दुखते थे। पर यह बात युधिष्ठिर को मालूम न थी।

एक दिन धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर से कहा–"बेटा, तुमने आज तक हमारे प्रति बड़ा आदर दिखाया। इससे हम दोनों बहुत ही प्रसन्न हैं। मैंने अनेक दान-धर्म किये, क्षत्रिय धर्म का अवलंबन कर मेरे पुत्र उत्तम लोकों को प्राप्त हुए हैं। मैंने उनके लिए श्राद्ध कर्म भी किये। अब मेरे द्वारा होनेवाला कोई कार्य बच न रहा। मुझे अब ऐसे पुण्य का अर्जन करना है जिससे मुझे व्यक्तिगत रूप से लाभ प्राप्त हो! तुम मान जाओगे तो मैं वानप्रस्थ में जाना चाहता हूँ। गांधारी भी मेरे साथ रहेंगी। मैं वन में रह कर भी तुम्हें आशीर्वाद देता रहूँगा कि सदा सर्वदा तुम्हारा कल्याण हो!"

इस पर युधिष्ठिर ने नहीं माना। उसने बताया–"आप वन में कष्ट भोगते रहेंगे तो मैं यहाँ सुखपूर्वक शासन नहीं कर सकता। आप उपवास करते पृथ्वी पर शयन करेंगे तो मेरी तथा मेरे भाइयों की भी क्या दुनिया निंदा नहीं करेगी? मुझे यह राज्य नहीं चाहिए; और न ये सुख-भोग ही। मैं यह राज्य युयुत्स को सौंप देता हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि आप किसी कारण वश दुखी होकर ये बातें कह रहे हैं। मैं आपके दुख को दूर कर सकता हूँ।"

"मेरे मन में तपस्या करने की कामना है। हमारे वंश के लोगों के लिए वनवास

करने की परिपाटी रही है। मैं तुम्हारे पास काफी समय तक रहा। मैं वृद्ध भी हो चुका हूँ। मेरे वनवास को तुम्हें मान लेना चाहिए।" धृतराष्ट्र ने समझाया। उसने वानप्रस्थ में जाने के लिए न केवल हठ किया, बल्कि यदि युधिष्ठिर इसके लिए अपनी सम्मति न देंगे तो वह भोजन तक न करेगा।

उस वक़्त व्यास महर्षि ने वहाँ पर पहुँच कर युधिष्ठिर को समझाया कि धृतराष्ट्र को वानप्रस्थ में जाने के लिए सम्मति दे। तब जाकर युधिष्ठिर ने मान लिया और धृतराष्ट्र ने भी अनशन तोड़कर भोजन भी किया।

धृतराष्ट्र के वानप्रस्थ में जाने का समाचार जान कर हस्तिनापुर के सभी वर्णों के लोग उन्हें देखने आये। धृतराष्ट्र ने उन लोगों से कहा—"मैं और गांधारी दोनों मिलकर वनवास में जा रहे हैं। इसके लिए आप लोगों को हमें अनुमति देनी होगी। मेरा पूर्ण विश्वास है कि दुर्योधन की अपेक्षा युधिष्ठिर कहीं अच्छा शासन करता है। इस पृथ्वी पर पहले शंतनु, बाद को भीष्म और विचित्रवीर्य ने शासन किया था। मैंने भी यथाशक्ति आप लोगों की थोड़ी-बहुत सेवा की। मैं नहीं जानता कि मेरा शासन कार्य कैसा था? उसमें अगर कोई भूलें हो तो मुझे क्षमा कर दीजिए। हमारे दुर्योधन ने दुष्ट बुद्धि के कारण क्षत्रिय वंश का विनाश किया है, उसमें मेरा भी दोष रहा है। मैं आप लोगों के सामने हाथ जोड़ कर बिनती करता हूँ कि आप लोग उन तृटियों को भूल जाइए। आज से युधिष्ठिर आप लोगों पर शासर करेगा।"

ये बातें सुनकर जनता के प्रतिनिधि के रूप में एक ब्राह्मण ने धृतराष्ट्र से कहा—"राजन, आप ने हमारे प्रति बड़े ही स्नेह का व्यवहार किया है। आपके वंश के किसी व्यक्ति ने हमें कोई कमी होने न दी। दुर्योधन ने भी हमारे प्रति कोई द्रोह

नहीं किया है। आप वनवास में जायेंगे तो हम सदा के लिए संताप का अनुभव करेंगे। युद्ध ला खड़ा करने के कारण हम दुर्योधन को दोष नहीं देते। कुरु वंश के क्षय का कारण भगवान हैं, अन्य कोई नहीं हैं। युधिष्ठिर उत्तम पुरुष हैं। हम चाहते हैं कि वे हम पर एक सहस्त्र वर्ष तक शासन करें।"

दूसरे दिन सवेरे विदुर युधिष्ठिर के पास आकर बोले–"बेटा, धृतराष्ट्र कार्तिक मास में वनवास करने जानेवाले हैं। जाने के पूर्व वे भीष्म, सोमदत्त, बाह्लिक, द्रोण, सैंधव, अपने पुत्र तथा मित्रों के भी श्राद्ध-कर्म करनेवाले हैं। इसके लिए वे थोड़ा धन चाहते हैं।"

विदुर की बातें सुन धन देने के लिए युधिष्ठिर और अर्जुन ने बड़ी प्रसन्नता के साथ स्वीकार कर लिया, पर भीम मौन रहा। इस पर अर्जुन ने भीम को समझाया– "तुम भी थोड़ा धन दे दो। धृतराष्ट्र वानप्रस्थ जाने के पहले श्राद्ध करने के लिए हम से धन की याचना कर रहे हैं। तुम्हें शायद स्मरण होगा कि हमने भी एक बार अपने राज्य के लिए उनकी याचना की है।"

इस पर भीम ने कहा–"भीष्म, सोमदत्त, बाह्लिक, भूरिश्रव, द्रोण तथा अन्य लोगों

के लिए श्राद्ध कर्म करने के वास्ते धन दिया जा सकता है. कर्ण के लिए कुंती धन देंगी; पर दुर्योधन आदि के लिए हम धन क्यों दे? वे अगर उत्तम लोकों को प्राप्त न करें तो क्या हुआ? हमें तो उन लोगों ने असंख्य यातनाएँ जो दी हैं?"

तब युधिष्ठिर ने भीम से कहा–"अब तुम मौन रहो तो अच्छा है।" फिर विदुर से कहा–"भीम को दुखी होने की कोई जरूरत नहीं। धृतराष्ट्र जो भी धन चाहते हैं, मैं दे दूंगा।"

इसके उपरांत धृतराष्ट्र ने बड़े पैमाने पर श्राद्ध कर्म किये। युधिष्ठिर के द्वारा अपार दान दिलाये। इस कार्य के समाप्त

होते ही दूसरे दिन धृतराष्ट्र गांधारी के साथ कार्तिक पूजा करके, वल्कल पहने वानप्रस्थ के लिए चल पड़े। उनके आगे अग्निहोत्र चल पड़े। उनके पीछे कौरव नारियाँ चलीं। उनके जाते देख पांडव रो पड़े। कुंती देवी ने गांधारी का हाथ पकड़ कर चलाया। द्रौपदी, सुभद्रा, परीक्षित के साथ उत्तरा तथा नगर की नारियाँ भी चल पड़ीं। विदुर तथा संजय ने धृतराष्ट्र के साथ जाने की अनुमति प्राप्त की।

धृतराष्ट्र ने नगर का द्वार पारकर युयुत्स तथा कृपाचार्य को वापस लौटने को कहा। एक एक करके पीछे हट गये। आखिर युधिष्ठिर मात्र बच रहें। उसने कुंती देवी से कहा—"माँ, तुम लौट जाओ। मैं इस महाराज के साथ जाऊँगा।"

मगर कुंती ने गांधारी तथा धृतराष्ट्र के साथ जाने का निश्चय कर लिया। उसने युधिष्ठिर से कहा—"बेटा, गांधारी और धृतराष्ट्र मेरे सास-ससुर के समान हैं। इनकी सेवा करते मैं भी तपस्या करूँगी।" सभी पांडवों ने उसको रोकना चाहा। मगर उसने उनकी बात नहीं सुनी। आखिर विवश हो पांडव द्रौपदी के साथ हस्तिनापुर को लौट आये।

धृतराष्ट्र शाम तक चलकर गंगा के तट पर एक स्थान पर रुक गये। ब्राह्मणों ने अग्निहोत्र किये। तब विदुर और संजय ने धृतराष्ट्र तथा गांधारी के वास्ते दाभों के शयन तैयार किये। वह रात आनंद से बीत गई।

विदुर की सलाह पर गंगा के तट पर ही धृतराष्ट्र के लिए एक पर्णशाला बनाई गई। वहाँ पर कुछ दिन रहकर धृतराष्ट्र कुरुक्षेत्र के एक आश्रम में पहुँचे। वहाँ पर शतायूप नामक एक राजर्षि रहा करता था। वह अपने पुत्र को राज्य सौंप कर वानप्रस्थ में आया था। धृतराष्ट्र ने तपस्या प्रारंभ की। उन्हें देखने के लिए यदि कोई आ जाते तो कुंती उनकी

परिचर्या करती थी। धृतराष्ट्र तपस्या करते बीच-बीच में अनेक कथाएँ सुना करते थे।

धृतराष्ट्र के चले जाने पर नगर वासियों को लगा कि नगर की शोभा घट गयी है। वे सदा उस वृद्ध राजा के बारे में बातचीत किया करते थे। अब पांडवों की बात तो कुछ कहने की ज़रूरत न थी। धृतराष्ट्र के साथ अपनी माँ कुंती के चले जाने से वे जीवित शव के समान हो गये थे और किसी चीज़ के प्रति भी उनकी अभिरुचि न रही।

सब से अधिक सहदेव व्याकुल हो उठा। वह कुंती को देखने के लिए उतावला रहने लगा। द्रौपदी ने भी एक दिन युधिष्ठिर से बताया–"सभी औरतें गांधारी, धृतराष्ट्र तथा कुंतीदेवी को देखना चाहती हैं।"

फिर क्या था, तत्काल ही युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के आश्रम के लिए यात्रा का प्रबंध किया। उसने घोषणा करायी कि जनता भी आना चाहे तो आ सकती है। दूसरे दिन ही यात्रा का प्रबंध हुआ।

उनके साथ एक महा सेना ही चल पड़ी। रथ, घोड़े, ऊँट तथा पैदल भी लोग चल पड़े। औरतें पालकियों पर चल पड़ीं। युयुत्स तथा धौम्य राजमहल में रह गये। पांडवों के आगमन का समाचार जान कर कुछ आश्रमवासी उन्हें देखने आये। युधिठिर ने उनसे पूछा–"मेरे काकाजी कहाँ पर हैं?"

उन लोगों ने बताया कि धृतराष्ट्र पुष्प तथा जल लाने के लिए यमुना नदी में गये हुए हैं। पांडव उनके बताये मार्ग पर गये और दूर पर धृतराष्ट्र, गांधारी तथा कुंतीदेवी को देखा। सहदेव तेजी से दौड़कर गया और कुंतीदेवी के चरण पकड़कर रोने लगा। उसने भी आँसू बहाते सहदेव को उठाकर उसको आलिंगन में ले लिया और यह समाचार गांधारी को दिया। इतने में उसे और पांडव भी दिखाई दिये।

इसके बाद पांडव तथा उनकी पत्नियों को अपने चारों ओर बैठे देख धृतराष्ट्र को लगा कि वे पुनः हस्तिनापुर में ही आ गये हैं। आश्रम के सभी मुनि पांडवों को देखने आये। संजय ने मुनियों को पांडवों का परिचय कराया। उन सब के चले जाने पर युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र से कुशल-प्रश्न पूछने के बाद कहा–"विदुर दिखाई नहीं देते? वे कहाँ पर हैं?"

"विदुर अन्न-जल त्याग कर भयंकर तपस्या करते निर्बल हो गया है। ब्राह्मण बताते हैं कि वह दिगंबर हो वन में संचार करते जब तब दिखाई देता है।" धृतराष्ट्र ने उत्तर दिया।

धृतराष्ट्र ये शब्द कह ही रहे थे, तभी दूर पर विदुर आश्रम की ओर लौटते दिखाई दिया। युधिष्ठिर अकेले विदुर की ओर चल पड़ा। विदुर दुर्गम जंगल के बीच कभी दिखाई देता और कभी अदृश्य हो जाता, इसे देख युधिष्ठिर चिल्लाकर दौड़ पड़ा–"विदुर! मैं तुमसे ही मिलने आ रहा हूँ।"

विदुर जंगल के बीच एक शून्य प्रदेश में खड़ा हो गया। "मैं युधिष्ठिर हूँ।" ये शब्द कहते वह विदुर के सामने खड़ा हो गया। विदुर इस प्रकार दुर्बल हो गया था। विदुर निर्निमेष युधिष्ठिर की ओर देखने लगा। युधिष्ठिर के मन में ऐसी अनुभूति हुई कि विदुर के अवयव उसके अवयवों के साथ मिलते जा रहे हैं और विदुर के प्राण अपने प्राणों में ऐक्य हो रहे हैं।

इसके थोड़ी देर बाद विदुर का शव एक वृक्ष से सटे युधिष्ठिर को दिखाई दिया। युधिष्ठिर ने विदुर के कलेवर का दहन-संस्कार करना चाहा, पर यतियों के लिए दहन-संस्कार धर्म विरुद्ध था। इसलिए अपने इस प्रयत्न को त्याग युधिष्ठिर आश्रम को लौट आया। सारी बातें सब को सुनाईं। सब लोग आश्चर्य में आ गये।

मित्र-भेद

[१२]

जुलाहे ने राजकुमारी को वचन तो दिया, पर उस क्षण से वह चिंता में डूब गया। उसे अब क्या करना होगा? गरुड़वाहन पर वह कहीं भाग सकता है। मगर उसे उसकी प्रेयसी प्राप्त न होगी। विक्रमसेन उसके ससुर का वध करके सुदर्शना को उठा ले जाकर उसके साथ विवाह कर लेगा। यदि वह युद्ध करेगा तो उसकी मौत निश्चित है! प्रेयसी के वियोग में भी उसकी मृत्यु अनिवार्य है। किसी भी हालत में अगर मरना है तो हिम्मत के साथ मर जाना ही विवेक की बात कहलायेगी। यदि वह भगवान नारायण के वेष में युद्ध में जायेगा तो शत्रु भ्रम में पड़कर डरकर भाग भी जा सकता है।

जुलाहे ने इस प्रकार निर्णय कर लिया, उधर वैकुण्ठ में गरुड़ ने श्रीमन्नारायण से भूलोक का सारा वृत्तांत सुनाकर निवेदन किया—"भगवन, आपका रूप धारणकर घूमनेवाला वह जुलाहा अगर युद्ध में मर जाएगा तो पृथ्वी पर आपकी पूजा करनेवाला कोई न रहेगा। आपके प्रति लोगों में विश्वास उठ जाएगा। इसलिए आप ही सोच लीजिए कि क्या करना उचित होगा?" इस पर श्रीमन्नारायण ने यों जवाब दिया—"हे पक्षीराज! अन्यायपूर्वक कर वसूलनेवाले विक्रमसेन की मृत्यु होनी चाहिए। उल्टे वह मेरे भक्त राजवंश का निर्मूल करना चाहता है। मैं जुलाहे के भीतर प्रवेश करके उसके चक्र में बैठ जाऊंगा।"

अंतिम पृष्ठ का चित्र

प्रात:काल ही जुलाहा युद्ध के लिए तैयार हो गया। राजा भी अपनी सेना के साथ नगर के बाहर आया। दोनों सेनाएँ युद्ध के लिए सन्नद्ध हो उठीं। जुलाहे ने अपने गरुड़वाहन पर आसमान में उड़ते युद्धक्षेत्र में शंख ध्वनि की।

शंखनाद को सुनकर शत्रुसेना ने ऊपर देखा। यह सोचकर सारी सेनाएँ घबरा उठीं कि श्रीमन्नारायण ही उनके साथ युद्ध करने के लिए आये हैं। उनमें से बहुत से लोग जमीन पर गिर पड़े, अनेक लोग बेहोश हो गये, कुछ लोग घबड़ाये आसमान की ओर देखते रह गये। उस वक़्त जुलाहे ने अपने चक्र को शत्रु राजा विक्रमसेन पर फेंक दिया। चक्र विक्रमसेन के दो टुकड़े करके जुलाहे के हाथ वापस लौट आया। उसके सभी सामंत जुलाहे के सामने षाष्टांग गिर पड़े।

"आज से तुम लोग सुप्रतिवर्मा के अधिकार को स्वीकार कर लो।" जुलाहे ने कहा। सबने अपनी स्वीकृति दी। विक्रमसेन की सारी सेनाएँ सुप्रतिवर्मा के अधिकार में आ गयीं, इसके बाद जुलाहा शाश्वत रूप से राजकुमारी के साथ समस्त सुख भोगने लगा।

दमनक के मुँह से जुलाहे विष्णु की कहानी सुनकर करटक ने कहा—"अच्छी बात है! तुम्हारा यदि ऐसा गहरा विश्वास है तो पिंगलक के पास जाकर प्रयत्न करो, शायद तुम्हारी युक्ति काम दे!"

दमनक ने पिंगलक के पास जाकर झुककर प्रणाम किया और पिंगलक की अनुमति पाकर बैठ गया।

"तुम आज तक मुझे देखने क्यों नहीं आये?" पिंगलक ने पूछा।

"महाराज, आपके कुशल एवं सुरक्षा के वास्ते एक अत्यंत महत्वपूर्ण समाचार सुनाने यहाँ आया हूँ। कभी कभी ऐसी बातें भी सेवकों को निवेदन करनी पड़ती हैं जो हमारे राजा को रुचिकर नहीं होतीं। ऐसी बातें कहने की हिम्मत

विश्वासपात्र नौकरों में ही होती है!" दमनक ने कहा।

"तुम क्या कहना चाहते हो?" पिंगलक ने बड़ी उत्सुकता से पूछा।

"महाराज! आपके द्वारा आदर प्राप्त संजीवक ने राजद्रोह करने का षड़यंत्र किया है। आपका वध करके सिंहासन पर अधिकार करने की अपनी चाल को उसने कई लोगों के सामने प्रकट किया है। सुनने में आया है कि वह अपना षड़यंत्र आज ही अमल करनेवाला है। हम कई पीढ़ियों से आपकी सेवा करते आ रहे हैं। इसलिए आपको सचेत करना मेरा कर्तव्य है, मैं अपना कर्तव्य करने आपकी सेवा में आया हूँ।" दमनक ने चेतावनी दी।

यह समाचार सुनकर पिंगलक चौंक पड़ा। इसे भांपकर दमनक ने कहा–"महाराज, जो दांत एक बार हिल जाता है, उसे तुरंत उखाड़कर फेंक देना चाहिए। व्याधि का मूल के साथ निर्मूल करना चाहिए। जो हमारा शत्रु बन जाता है, उसका तत्काल नाश करना चाहिए। शासन की जिम्मेदारी आप इस बैल के हाथ सौंपकर उलझन में फँस गये हैं।"

"लेकिन संजीवक को अचानक मेरे प्रति द्रोह करने की नौबत क्यों आ पड़ी?

मैंने उसे असंतुष्ट बनाने का काम तो कोई नहीं किया है?" पिंगलक ने पूछा।

"महाराज! क्या दुष्ट के लिए कारणों की भी आवश्यकता है? मेरा संदेह है कि वह पहले से ही द्रोहबुद्धि ही रख रहा है। इस बैल जैसे दो शक्तिशालियों को इस जंगल में स्थान नहीं है। उसने कपट रूप से आपका अनुग्रह प्राप्त किया और अब आप ही को दगा देने को तैयार हो गया है। क्या आपने कृतघ्न की कहानी नहीं सुनी?" दमनक ने पूछा।

"कैसी है, वह कहानी?" पिंगलक ने पूछा। दमनक ने यों कथा सुनाई:

कृतघ्न की कहानी

यज्ञदत्त नामक एक बेकार दरिद्र के कई बच्चे थे। घर भर के लोग जब एक दिन फाका रहे तब यज्ञतत्त की पत्नी ने क्रोध में आकर कहा–"हे आवारे! क्या तुम्हारे बच्चों के भूखा रहने तुम देख नहीं रहे हो? देखते हुए भी अंधे बनकर चुप कैसे बैठे हुए हो? कहीं जाकर कुछ कमाकर तब घर आ जाओ।"

यह बात सुनकर ब्राह्मण बड़ा दुखी हुआ और घर से चल पड़ा। बहुत दूर जाने पर एक जंगल पड़ा। उसे प्यास लगी, तब वह पानी की खोज करने लगा। घने जंगल के बीच एक गहरा गड्ढा दिखाई दिया। उसके चारों तरफ़ घास उगी हुई थी, मगर उसमें पानी न था। यज्ञदत्त ने उस गड्ढे में झांक कर देखा। उसमें उसे एक बाघ, एक बंदर, एक सांप तथा एक आदमी दिखाई पड़े।

बाघ ने यज्ञदत्त से कहा–"महात्मन! प्राण की रक्षा करने से बढ़कर कोई पुण्य नहीं है. इसलिए मुझे बाहर निकालकर अपने घरवालों से मिलने का मौक़ा दीजिए।"

"तुम्हारा नाम सुनते ही लोग डर जाते हैं, ऐसी हालत में मैं तुम्हें कैसे बाहर निकालूं?" यज्ञदत्त ने पूछा।

"महाशय, हर पाप के लिए प्रायश्चित्त का विधान है, परंतु कृतज्ञता के लिए कोई परिहार नहीं है। मेरे बारे में तुम्हें डरने की कोई ज़रूरत नहीं। मुझ पर दया करके मुझे बाहर निकालो।" बाघ ने बिनती की।

ब्राह्मण ने सोचा कि दूसरों के प्राणों की रक्षा करने में अपने प्राण भले ही जायें, वह भी तो पुण्य है। यह सोचकर उसने जंगली लताओं से एक रस्सा बनाया, उसकी मदद से बाघ को ऊपर खींचा।

"महाशय, मुझे भी बाहर निकलने की कृपा करो।" बंदर ने प्रार्थना की। सांप ने भी ऐसा ही निवेदन किया। ब्राह्मण ने उन दोनों को भी गड्ढे से ऊपर निकाला।

१५०. प्राचीन मंदिर के खण्डहर

४००० वर्ष पूर्व बाबिलोनियनों ने अपने साम्राज्य की स्थापना की। उनका देवता "मर्डक" है। चित्र में मर्डक मंदिर का खण्डहर है। भूभाग से ऊपर की इमारत नष्ट हो गयी है। यह भाग खुदाई में निकल आया है। बाबिलोन नगर बग्दाद के दक्षिण में था।

Photo by K. S. Vijayaker

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

आपस में मिल ख़ुशी मनाते !

प्रेषक :
अविनाश कुमार

Photo by N. M. Kutchwaly
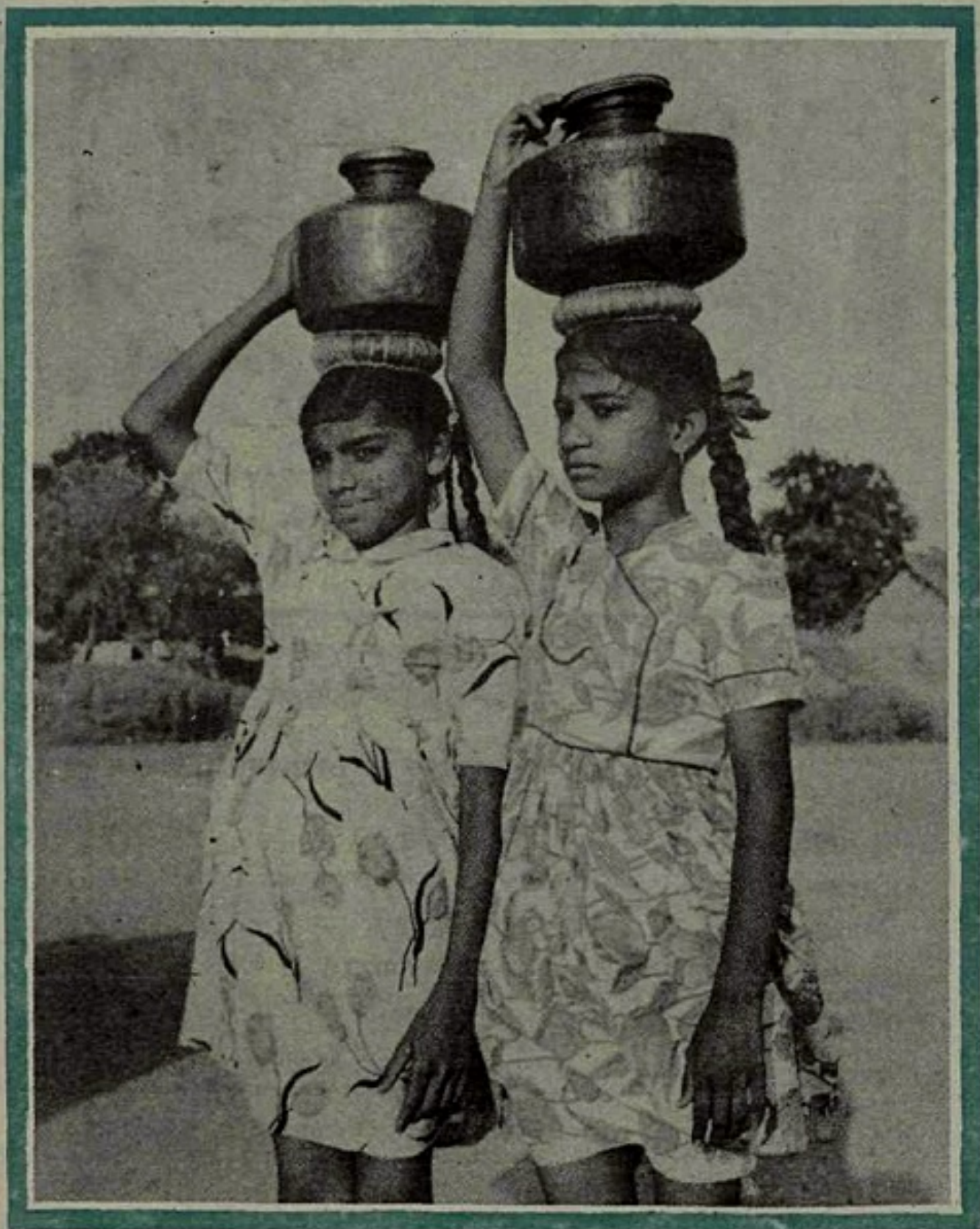
८४/८१, चौथी गली
गनेशगंज, लखनऊ

कभी न मेहनत से घबराते !!

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ जुलाई ५ तक प्राप्त होनी चाहिए। सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।
★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ सितम्बर के अंक में प्रकाशित की जायंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3, Arcot Road, Madras-600026. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

Photo by: **BRAHM DEV**

TWINS

CHANDAMAMA (Hindi) JULY 1974 Regd. No. M. 5452

मित्र-भेद